Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

# प्रह्लाद

## संग्रहालय विशेषांक



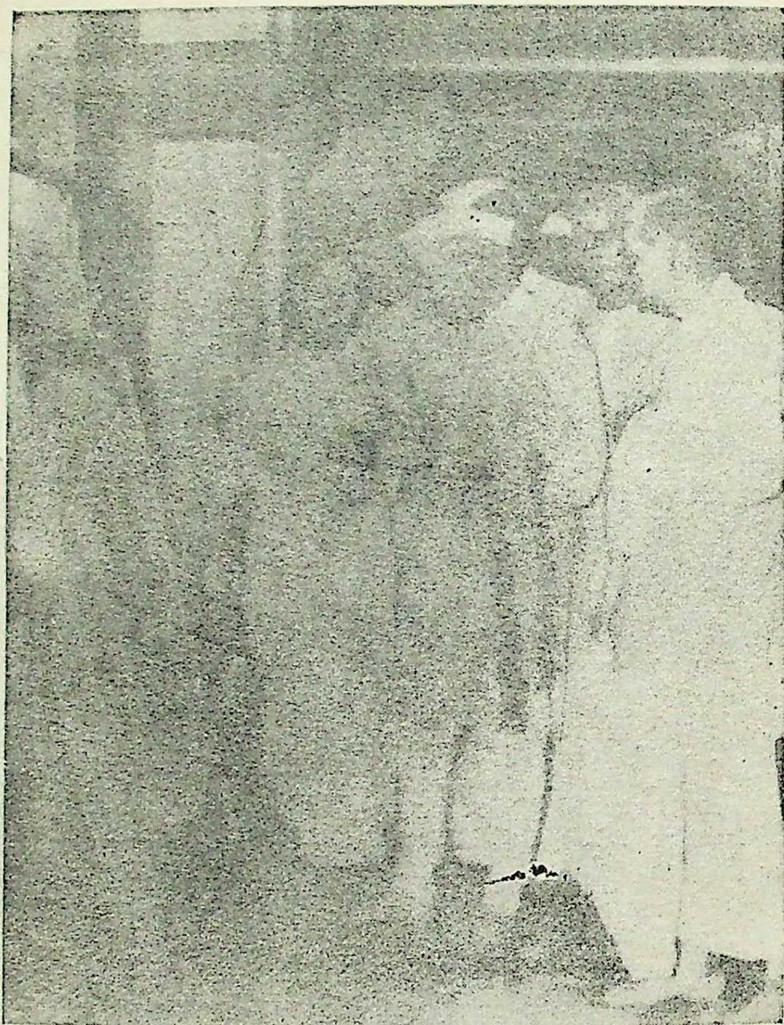
सेवक हनुमान आज्ञा प्राप्त करते हुए (गुरुकुल संग्रहालय कलादीर्घा से)

## गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

वर्ष : १९८७ ] ([illegible]) [ अङ्क : २

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri



वर्ष १९५८ में भूतपूर्व प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू गुरुकुल संग्रहालय का अवलोकन करते हुए। पं० हरिदत्त वेदालंकार तथा आचार्य प्रियव्रत संग्रहालय का परिचय दे रहे हैं।

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

# प्रह्लाद

(प्राच्यविद्याओं की त्रैमासिक शोध-पत्रिका)

सम्पादक

**डा० विष्णुदत्त राकेश**

पी-एच.डी., डी. लिट्.

प्रोफेसर तथा अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग

संयुक्त-सम्पादक

**डा० बिनोदचन्द्र सिन्हा**

एम०ए०, पी-एच०डी०

प्रोफेसर तथा अध्यक्ष

प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व

**जौलाई से सितम्बर—१९८७**




**गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार**

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रधान संरक्षक

**श्री रामचन्द्र शर्मा**

आई०ए०एस० (सेवानिवृत्त)

कुलपति

संरक्षक

**श्री रामप्रसाद वेदालंकार**

आचार्य एवं उप-कुलपति

प्रकाशक

**डा० वीरेन्द्र अरोड़ा**

कुलसचिव

व्यवस्थापक

**जगदीश विद्यालंकार**

पुस्तकालयाध्यक्ष

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

# * विषय सूची *



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri



विश्वविद्यालय के नव-नियुक्त परिद्रष्टा श्री सोमनाथ जी मरवाहा
(वरिष्ठ अधिवक्ता : उच्च न्यायालय)

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

# वैदिक वन्दना

ॐ यज्ञं यन्तं मनसा बृहन्तम्
अन्वारोहामि तपसा सयोनिः ।
उपहूताः अग्ने जरसः परस्तात्
तृतीये नाके सधमादं मदेम ।

अथर्व ६, १२२,४

**शब्दार्थ** — (बृहन्तम्) महान् (यज्ञम्) यज्ञ में (यन्तम्) जाते हुए, विद्वानों के साथ (तपसा) तपस्या से (सयोनिः) सगोत्र, समान शक्तिसम्पन्न, (मनसा) मन से (अन्वारोहामि) यज्ञभूमि में चढ़ता हूँ। (अग्ने) हे अग्निदेव (उपहूताः) आपके द्वारा आमंत्रित हम (जरसः परस्तात्) वृद्धावस्था के पश्चात्, इस शरीर के त्याग देने के बाद, (तृतीये नाके) सर्वोच्च मुक्तिपद में (सब दुःखों से रहित स्वर्ग में), (सधमादम्) साथ प्रसन्नतापूर्वक रहते हुए (मदेम) आनन्द का अनुभव करें।

**हिन्दी अर्थ**—महान् यज्ञ में जाते हुए विद्वानों के साथ, तपस्या से समान शक्तिवाला, मैं मन से यज्ञभूमि में जाता हूँ। हे अग्निदेव ! आपके द्वारा आमंत्रित हम वृद्धावस्था के पश्चात् (शरीरत्याग कर) परममुक्तिधाम में साथ ही प्रसन्नतापूर्वक रहते हुए आनन्दित हों।

—डा० कपिलदेव द्विवेदी

यज्ञ हेतु जाने वाले शिवसंकल्पी बुधजन के साथ,
तप-समता सम्पन्न लिए मन पकड़ूँ अग्निदेव का हाथ,
देहाध्यास छोड़ आत्मा की यज्ञभूमि पर गमन करूँ,
उस सर्वोच्च मुक्तिपद में रसरूप ब्रह्म में रमण करूँ।

—डा० विष्णुदत्त राकेश

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

*सम्पादक की कलम से—*

# ८७वाँ दीक्षान्त

१४ अप्रैल '८७ को विश्वविद्यालय का दीक्षान्त समारोह विश्वविद्यालय भवन में सम्पन्न हुआ। कुलपति श्री रामचन्द्र शर्मा ने विश्वविद्यालय का प्रगति-विवरण प्रस्तुत करते हुए शिक्षाप्रसार तथा शोध के क्षेत्र में अर्जित उपलब्धियों पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा—"गुरुकुल प्रणाली वर्तमान परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रीय अखण्डता, समाजसेवा, मानवजाति की एकता, विश्वव्यापी प्रेम, चरित्रनिर्माण, आत्मानुशासन, सामाजिक तथा लोकतांत्रिक न्याय, सामूहिक कार्यचेतना, ज्ञान की खोज तथा प्रसार जैसे उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक हो सकती है। गुरुकुल के ब्रह्मचारी व्रताभ्यास, योगाभ्यास तथा आत्मानुशासन से बल ग्रहण करके ही राष्ट्रीय जीवन में योगदान कर सकते हैं।"

दीक्षान्त-भाषण उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री माननीय श्री वीरबहादुर सिंह ने किया। गुरुकुल के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए मुख्यमन्त्री जी ने कहा – 'गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रतिपादित शिक्षानीति के आधार पर की थी। धर्म एवं देश की रक्षा तथा समाजसुधार के लिए स्वामीजी ने अपना सम्पूर्ण जीवन समाज को समर्पित कर दिया था। गुरुकुल खोलने में उनका उद्देश्य एक ऐसी संस्था की स्थापना करना था जहाँ विद्यार्थियों का चरित्र-निर्माण हो, शांति एवं पवित्र वातावरण में शिक्षा ग्रहण कर सकें, प्राच्य एवं आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के विषयों का अध्ययन करें तथा भारतीय संस्कृति के पोषक बनकर समाज-कल्याण पर चिंतन करें। गुरु-शिष्य परम्परा में छात्रगण आश्रम में रहकर गुरु के गुण को ग्रहण कर चरित्रवान् एवं उत्तम नागरिक बनें। मुझे प्रसन्नता है कि गुरुकुल ने अपना यह लक्ष्य बहुत दूर तक पूरा किया है।' शिक्षा के उद्देश्य की पूर्णता तभी है जब व्यक्ति में ज्ञान-वृद्धि के साथ-साथ व्यक्तिगतगुणों में भी अभिवृद्धि हो और उसमें सामाजिक दायित्व के निर्वाह तथा अर्थोपार्जन की अपेक्षित क्षमता का विकास हो। अब समय आ गया है कि देश, काल एवं परिस्थिति को दृष्टिगत रखते हुए शिक्षापद्धति में बुनियादी परिवर्त्तन लाया जाए। मैकाले की शिक्षापद्धति, जिसका उद्देश्य अंग्रेजी सरकार के कामकाज के लिए 'बाबू' तैयार करना मात्र था, अब हमारे स्वतन्त्र राष्ट्र के लिए अधिक उपयोगी नहीं रह गई है। अब यह देश अंग्रेजों का नहीं, हमारा है, आपका, हम सबका है। अब शिक्षा के वर्तमान ढाँचे में आमूल परिवर्तन की आवश्यकता और इसे समाज एवं व्यक्ति के लिए उपयोगी बनाया जाना चाहिए। स्वतन्त्रता के पूर्व महात्मा गाँधी ने हमें शिक्षा के



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सम्बन्ध में एक नई दिशा दी थी और बुनियादी शिक्षा के रूप में उन्होंने बुनियादी दस्तकारियों के माध्यम से शिक्षा देने के सिद्धान्त को प्रतिपादित कर भारतवासियों को स्वावलम्बन एवं आत्मनिर्भरता का पाठ पढ़ाया था। स्वतन्त्रता के बाद पण्डित जवाहरलाल नेहरू तथा श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने शिक्षा को देश की बदलती हुई आवश्यकताओं से जोड़ा और अब श्री राजीव गाँधी ने शिक्षा को राष्ट्रीय एकता और विकास से सम्बद्ध करने पर बल दिया है तथा शिक्षा को नई दिशा दी है। इन प्रयासों से ही शिक्षा के इस नये प्रारूप में सम्पूर्ण देश में शिक्षा की दिशा एक होगी और समाज के योग्य तथा प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति, चाहे वे किसी कमजोर वर्ग के या किसी जाति के क्यों न हों, सभी अपनी योग्यतानुसार अच्छी से अच्छी शिक्षा प्राप्त करने के अधिकारी होंगे। हमें चाहिए कि एकजुट होकर सत्यनिष्ठा एवं अटूट लगन से कठिन परिश्रम करके राष्ट्र के विकास में सतत् योगदान देते रहें। नैतिक मूल्यों को जीवन में उतारें तथा अपने व्यक्तिगत दायित्वों के साथ-साथ अपने सामाजिक कर्त्तव्यों को भी पूरा करें।

मुख्यमन्त्री जी ने इस अवसर पर पुस्तकालय के लिए ७ लाख रुपये तथा संग्रहालय के लिए १ लाख रुपये का विशेष अनुदान देने की घोषणा की। परिसर में विशाल स्पोर्ट्स स्टेडियम बनवाने की घोषणा वह पहले ही कर चुके थे। कुलपति श्री रामचन्द्र शर्मा ने मुख्यमन्त्री जी को कुलवासियों तथा इस अवसर पर पधारे शिष्टपरिषद्, कार्यपरिषद्, शिक्षापटल के मान्य सदस्यों तथा श्रद्धालु आर्यजनों की ओर से धन्यवाद दिया तथा आशा व्यक्त की, कि मुख्यमन्त्री जी इन घोषणाओं की पूर्ति यथाशीघ्र करायेंगे।

विश्वविद्यालय के कुलाधिपति तथा सुप्रसिद्ध इतिहासकार डा० सत्यकेतु विद्यालंकार ने दीक्षान्तसमारोह की अध्यक्षता की। डा० वीरेन्द्र अरोड़ा, कुलसचिव ने कार्यक्रम का सफल संचालन किया।

---

## विश्वविद्यालय के नये परिद्रष्टा

विश्वविद्यालय के कुलसचिव डा० वीरेन्द्र अरोड़ा द्वारा दी गई सूचना के अनुसार विश्वविद्यालय की शिष्टपरिषद् ने अपनी एक बैठक में आर्यसमाज के कर्मठ नेता, विधिविशेषज्ञ और उच्च न्यायालय के वरिष्ठ अधिवक्ता श्री सोमनाथ जी मरवाह को विश्वविद्यालय के नए परिद्रष्टा के रूप में सर्वसम्मति से चुन लिया है। अभी तक इस पद पर गुरुकुल के यशस्वी स्नातक तथा सुप्रसिद्ध वैदिक विद्वान् डा० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार कार्यरत थे। उनका कार्यकाल समाप्त हो गया था। उनके स्थान पर श्री मरवाह के नाम का प्रस्ताव आर्यसमाज की सार्वदेशिक सभा के प्रधान स्वामी आनन्दबोध सरस्वती ने किया था। श्री मरवाह सभा के कोषाध्यक्ष भी हैं। इससे पूर्व श्री मरवाह विश्वविद्यालय के निःशुल्क कानूनी सलाहकार रहे हैं। हर संकट की घड़ी में विश्वविद्यालय



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

की रक्षा के लिए उनकी सेवाएँ उपलब्ध रही हैं। १९७७ से १९८० तक के संघर्ष और उसके बाद के समय में गुरुकुल को व्यवस्थित, विकसित तथा उन्नत करने में उन्होंने कोई कसर उठाकर नहीं रखी। वे गुरुकुल के साथ अभिन्न हैं तथा प्रयत्नशील हैं कि गुरुकुल ज्ञान-विज्ञान के प्रचार-प्रसार के साथ वैदिकधर्म तथा आर्यसमाज के लिए भी उपयोगी सिद्ध हो।

---

## आचार्य गोवर्धन शास्त्री पुरस्कार

गुरुकुल कांगड़ी के प्रारम्भिक आचार्यों में एक तथा हिन्दी में भौतिक विज्ञान तथा रसायन विज्ञान पर पुस्तकें लिखने वाले आचार्य गोवर्धन शास्त्री १९१४ में गुरुकुल छोड़कर दिल्ली के रामजस हाईस्कूल में मुख्याध्यापक हो गए थे। १९०५ में लाहौर से आपने बी०ए० किया तथा स्वामी श्रद्धानन्द जी के अनुरोध पर गुरुकुल आ गए। १९१८ में आपने संस्कृत में एम० ए० तथा १९२२ में एम० ओ० एल० तथा शास्त्री की परीक्षाएँ उत्तीर्ण कीं। 'वेदों का अनादित्व' पुस्तक लिखकर आपने वेदों की प्राचीनता और प्रामणिकता पर गम्भीर प्रकाश डाला। पाकिस्तान के डेरा गाजीखान जनपद के ताशाशरीफ गाँव में वेद-प्रचार के केन्द्र के रूप में आपने संघड़ वर्नाकुलर हाईस्कूल की स्थापना की। यहाँ से वह पश्चिमी सीमाप्रांत में आर्यसमाज व आर्यधर्म का प्रचार करने का अभियान चलाना चाहते थे। आपके सुपुत्र श्री बलभद्रकुमार हूजा गुरुकुल के कुलपति रहे तथा विश्वविद्यालय को आत्मनिर्भर बनाने में आपने अविस्मरणीय योगदान किया। संघड़ विद्या सभा ट्रस्ट जयपुर ने आर्यसमाज, साहित्य, शिक्षा, समाजसेवा तथा प्रचारकार्य के लिए शास्त्री जी की स्मृति में एक पुरस्कार की प्रतिष्ठा की है। इसमें प्रशस्तिपत्र, उत्तरीय तथा एक सहस्त्र रुपये सम्मान-राशि के रूप में उक्त कार्यों के लिए किसी व्यक्ति को प्रतिवर्ष समर्पित किए जाते हैं। १९८१ में पहला पुरस्कार प्रो० रामप्रसाद वेदालंकार, उपकुलपति गुरुकुल कांगड़ी को दिया गया। अब तक क्रमश: पुरस्कार के विजेता डा० भवानीलाल भारतीय, पण्डित विश्वनाथ, विद्यामार्तण्ड पण्डित सत्यकाम विद्यालंकार, वेदमार्तण्ड पण्डित भगवद्दत्त वेदालंकार, वेदमार्तण्ड आचार्य प्रियव्रत, शतायु हिन्दी-लेखक श्री संतराम बी० ए० रहे हैं। इस वर्ष का पुरस्कार वेदमनीषी डा० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार, शिक्षाशास्त्री श्री दत्तात्रेय बावले तथा समाजसेवी लाला चेतनदास (मरणोपरांत) को दिया गया है। डा० सत्यव्रत जी वेदों के उद्भट् विद्वान् हैं। उन्होंने दर्शन, धर्म, शिक्षा, समाजशास्त्र, मानवशास्त्र, योग तथा होमियोपैथी पर हिन्दी, अंग्रेजी में उच्चकोटि के मौलिक ग्रन्थों की रचना की है। उनके गीताभाष्य की प्रशंसा श्री लाल बहादुर जी शास्त्री तथा श्री जयप्रकाश नारायण और उपनिषद्भाष्य की प्रशंसा डा० राधाकृष्णन जैसे विश्वविख्यात विद्वानों ने की है। श्री दत्तात्रेय बावले डी० ए० वी० कालेज अजमेर के प्राचार्य रहे हैं। आपके प्रयत्नों से ही ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज के कार्य को बढ़ावा देने के लिए दयानन्द कालेज में दयानन्द शोधपीठ की स्थापना हुई है। पद्मभूषण डा० सूरजभान आपके कालेज को 'लघु विश्वविद्यालय' कहते थे। आपकी



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

शैक्षिक तथा साहित्यिक सेवाओं के लिए १९७१ में तत्कालीन उपराष्ट्रपति डा० गोपाल स्वरूप पाठक की अध्यक्षता में आपका सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया था। विरजानन्द स्कूल आदि १३ शिक्षणसंस्थाएँ खोलकर तथा भारतीय रेडक्रास समिति जिला शाखा अजमेर के अध्यक्ष के रूप में निर्धन, पिछड़े एवं दलित वर्गों के कल्याण के लिए अनेक योजनाएँ क्रियान्वित कर आपने प्रशंसनीय सेवाएँ की हैं।

लाला चेतनदास जालन्धर के निष्काम समाजसेवी रहे और वर्षों तक संघड़ सभा के साथ संलग्न होकर उन्होंने उल्लेखनीय सेवाएँ कीं। इन तीनों महानुभावों को 'आचार्य गोवर्धन शास्त्री पुरस्कार' से सम्मानित कर संघड़ सभा ने आदर्श कार्य किया है। १९ अप्रैल '८७ को तालकटोरा गार्डन दिल्ली में विश्वविद्यालय के कुलपति श्री रामचन्द्र शर्मा ने तथा श्री बलभद्रकुमार हूजा ने पुरस्कार समर्पण का कार्य किया। महात्मा हंसराज दिवस समारोह पर प्रदत्त इन पुरस्कारों का उपस्थित शिक्षाविद्, साहित्यकार तथा आर्यबन्धुओं ने करतल ध्वनि से समर्थन किया।

---

**शोषितजन की ऊर्जा और मनुष्य के भीतर की प्रेम-लौ के साधक**

## कवि केदारनाथ अग्रवाल सम्मानित

२३ फरवरी १९८७ को साहित्य अकादमी ने हिन्दी कवि केदारनाथ अग्रवाल को उनकी रचना 'अपूर्वा' के लिए पुरस्कृत किया। अग्रवाल जी का जन्म १९११ में बाँदा जिले के कमासिन गाँव में हुआ। प्रयाग और आगरा विश्वविद्यालय से बी० ए० तथा एल-एल० बी० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण कीं। निराला और डा० रामविलास जी से निकटतम सम्पर्क रहा। हिन्दी के प्रगतिशील आन्दोलन से सक्रियरूप से जुड़े तथा हँस और नया साहित्य में नियमित लिखते रहे। प्रगतिवादी दृष्टि तथा उद्बोधनात्मक शैली प्रारम्भिक रचनाओं में अधिक दिखाई पड़ती है। भाषाशैली और छन्दविधान सहज और व्यावहारिक है। प्रकृति के क्षेत्र में बिखरा जीवन-उत्साह उनके सामने था। गाँव, खेत, खलिहान, नदी, नाले, आस-पास का परिवेश और जनसंकुलता उन्हें आकृष्ट कर रही थी। तीखी व्यक्तिगत संवेदना और सामाजिक पीड़ा का उन्होंने खुलकर अनुभव किया था। १९४७ में उनके दो काव्यसंकलन 'नींद के बादल' तथा 'युग की गंगा' नाम से प्रकाशित हुए। नींद के बादल संग्रह की रचनाओं में प्रेम का ज्वार था, सौन्दर्य की गरमाहट थी और थी कविप्रिया की गंधवर्णी संवेदनाएँ। उनकी रचनाओं में पर-नारी की मूर्ति नहीं, उनकी पत्नी श्रीमती पार्वती देवी की दाम्पत्य-छवि है। यह यथार्थ से उपजी है, इसे उन्होंने प्रिया-प्रियंवद नाम दिया है, यह कहते हुए—

**है न उतना गीत में रस**
**है न इतना काव्य में रस,**
**रूप में जितना तुम्हारे**
**प्राणप्यारी है भरा रस।**



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

'युग की गंगा' में प्रगतिवादी रचनाएँ संकलित हैं। वर्ग-वैषम्य, शोषित जीवन की संवेदना और आभिजात्य की विसंगति इन रचनाओं में फूट पड़ी है। छायावादी भाषा का कुहरा छाँटने वाले तथा मानवसभ्यता के ऐतिहासिक विकास में आस्था रखने वाले प्रगतिशील कवियों में केदार जी महत्वपूर्ण हैं। जनजीवन में सौन्दर्य की खोज करते-करते, मानवघाती परम्पराओं पर प्रहार करते-करते और नवयुग की आकांक्षाओं की पूर्ति करते-करते वह मानवतावादी हो गए हैं। निरुद्देश्य क्रान्ति उनके पास नहीं, आग्रहबद्ध जड़ता वहाँ फटकती नहीं, जनविश्वास और सामाजिकसम्बन्धों को उभारना ही उनका लक्ष्य है। लोकसंपृक्ति उनकी कविता की प्रमुख पहचान है। चित्रकूट कविता की कुछ पंक्तियाँ यहाँ इस आशय से उद्धृत हैं, जिनमें धार्मिक रूढ़ियों पर व्यंग्य किया गया है—

**चित्रकूट के बौड़म यात्री**
**सतुआ, गुड़ गठरी में बाँधे**
**गठरी को लाठी पर साधे,**
**लाठी को काँधे पर टाँगे,**
**दिन भर अधरम करने वाले**
**पर नर को ठगने वाले**
**पर सम्पति को हरने वाले।**

स्वयं कवि के शब्दों में—'युग की गंगा में समाज की अर्थनीति के विरुद्ध प्रहार है, कटुजीवन का व्यंग्य है, प्रकृति का किसानी चित्रण है। जिंदगी की भीड़ की इन कविताओं में जनता के मोर्चे की प्रतिध्वनि है।'

केदार जी की अन्य रचनाएँ हैं—फूल नहीं रंग बोलते हैं, आग का आईना, समय-समय पर, लोक-आलोक, बोले-बोल अबोल तथा अपूर्वा। केदार जी के दीर्घजीवी होने के लिए अनेक मंगलकामनाएँ।

---

## संस्कृतव्याकरण का एक स्तम्भ गिरा

९० वर्ष की परिणत वय तक निरन्तर संस्कृत भाषा और व्याकरण पर चिन्तन, मनन और लेखन का कार्य करते रहने वाले विद्वान् पण्डित चारुदेव शास्त्री का निधन हो गया। सन् १९७१ में उन्हें राष्ट्रपति सम्मान मिला था। दिल्ली संस्कृत साहित्य सम्मेलन की स्वर्ण-जयन्ती के अवसर पर डा० राधाकृष्णन जी ने उन्हें विद्यावाचस्पति की उपाधि से अलंकृत किया था। जीती-जागती सरल संस्कृत लिखने-पढ़ने की वह सदैव प्रेरणा देते रहे। उन्होंने स्वयं संस्कृतव्याकरण को महाभारत, काव्य, नाटक आदि के प्रयोगों से जोड़कर रोचक बनाया। वह संस्कृतव्याकरण को सर्जना की सजीव भाषा से जोड़ने के पक्षधर थे। पाँच खण्डों में लिखा उनका व्याकरण चन्द्रोदय ग्रन्थ इस कथन की पुष्टि



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करता है। व्याकरणिक प्रयोग और शिष्ट प्रयोगों की महत्ता उन्होंने समझाई। संस्कृत के पुराने मुहावरों की विशेषता बताते हुए संस्कृत के मामकरूप की व्याख्या शास्त्री जी ने अपने ग्रन्थों में की। शब्दापशब्द विवेक, वाक्यमुक्तावली और वाग्व्यवहारादर्श उनकी ऐसी पुस्तकें हैं। गाँधिचरित की भाषा देखकर आप मुग्ध हो उठेंगे। इसमें गाँधी जी के समसामयिक समस्याओं पर लिखे भाषणों और पत्रों का बोलचाल के अंदाज में संस्कृत अनुवाद है। पतंजलि के महाभाष्य के ६ आह्निकों का हिन्दी अनुवाद कर तथा कैयट और नागेश के मन्तव्यों का सरल हिन्दी में व्याख्यान कर, हिन्दीविद्वानों का मार्ग साफ किया। भर्तृहरि के वाक्यपदीय के भाषाशास्त्रीय अध्ययन की ओर विद्वानों का ध्यान उन्होंने ही आकृष्ट किया था। संस्कृतअध्यापन की वैज्ञानिक तथा सरस शैली का भी आविष्कार शास्त्री जी ने किया था। उनका 'उपसर्गार्थ चन्द्रिका' ग्रन्थ व्याकरण के क्षेत्र में अभूतपूर्व है क्योंकि इसमें उपसर्गों के उदाहरण विशाल संस्कृत वांग्मय से एकत्र किए गए हैं। व्याकरण और व्यवहार को एक साथ रखकर संस्कृतशब्दों के विश्लेषण की गंभीर क्षमता शास्त्री जी में थी। संस्कृत के ऐसे ऋषितुल्य विद्वान् के निधन से हुई अपार क्षति की पूर्ति असंभव है। उनकी स्मृति को प्रणाम। ❀

## अरे यायावर रहेगा याद !

हिन्दी के अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त कवि श्री सच्चिदानंद वात्स्यायन अज्ञेय का निधन हो गया। उनके भतीजे सिद्धार्थ वात्स्यायन, प्रसिद्ध लेखक शील काफ निगम, कवि-सम्पादक केशव मलिक तथा प्रोफेसर मानसमुकुल दास उनके अस्थिअवशेष लेकर हरिद्वार पधारे। मुझे इस अवसर पर स्वर्गीय कवि की एक कविता स्मरण हो आई और उसे मैंने श्रद्धांजलि के रूप में पढ़ा—

**मैं मरूँगा सुखी,**
**क्योंकि तुमने जो जीवन दिया था,**
**उससे मैं निर्विकल्प खेला हूँ,**
**खुले हाथों मैंने उसे बारा है,**
**मैं मरूँगा सुखी**
**मैंने जीवन की धज्जियाँ उड़ाई हैं।**

आज अज्ञेय नहीं हैं, पर जीवन के प्रति उनका अनासक्त लगाव मुझे उनकी सतत् उपस्थिति का आभास दे रहा है। पेड़ पर वह बालकों के घरोंदे जैसा घोंसला बना रहे थे। उसमें कविता सुनाने वाले थे पर चिड़िया की कहानी बन गया उनका जीवन। 'अरी ओ करुणा प्रभामय' की ये पंक्तियाँ चरितार्थ हो उठीं—

**उड़ गई चिड़िया,**
**काँपी, फिर,**
**थिर**
**हो गई पत्ती।**



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

किसी डाल से चिड़िया के उड़ जाने पर पत्ती काँपती है और फिर धीरे-धीरे स्थिर हो जाती है जैसे कुछ हुआ ही न हो, निस्पंद और निर्विकार। इसी तरह जीवन की चिड़िया संसार के उपवन से उड़ जाती है, परिवार में हलचल होती है और फिर सब कुछ शांत हो जाता है। संसार का कार्य पूर्ववत् चलने लगता है। पर क्या अज्ञेय का चला जाना एक छोटे-से क्रियाव्यापार तक सीमित रहेगा? उनके उड़ जाने पर क्या साहित्यिकों का मनरूपी पत्ता काँप कर फिर सहज स्थिर हो जाएगा। नहीं, यह रिक्ति कभी भरेगी नहीं। अज्ञेय हिन्दी-वाटिका की 'हरी घास पर क्षणभर' बैठने के लिए भले ही आए हों पर वह 'बावरा अहेरी' जिसने 'इन्द्रधनुष रौंदे हुए' देखकर भी 'इत्यलम्' नहीं समझा, बराबर याद आता रहेगा। उन्होंने अपने कविजीवन को स्वयं प्रतीक देते हुए कहा था—'अरे यायावर रहेगा याद'।

अज्ञेय का जन्म ७ मार्च १९११ को देवरिया के कसया स्थान पर हुआ। उनके पिताश्री हीरानंद शास्त्री पुरातत्त्ववेत्ता थे। कुशीनगर या कसया में बीता अज्ञेय का बचपन। उनका अन्तर्मन श्रमणसंस्कारों से भरा था, उसमें शिशु बुद्ध का आलोक ठहर गया था और बाद में जब वह फ्रांस गए तो इसी भाव के कारण वह 'पियेर द क्ववीर' ईसाई मठ में ठहरे। अज्ञेय जी ने १९२९ में फॉरमन कालेज लाहौर से बी०एस-सी० की परीक्षा उत्तीर्ण की। अंग्रेजी, संस्कृत, बंगला पर उनका पूर्ण अधिकार था। उनका सम्पर्क क्रांतिकारियों से भी रहा। हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातन्त्र सेना के सदस्य रहे। भगतसिंह, चन्द्रशेखर आजाद, सुखदेव तथा भगवतीचरण वोहरा से उनका परिचय बढ़ा। भगतसिंह को छुड़ाने के लिए बम बनाने का कार्य शुरु किया। १५ नवम्बर १९३० को गिरफ्तार कर लिए गए। १९३६ तक उनका जीवन यातनाओं और संघर्ष में बीता। क्रांति तब उनके जीवन और रचनाओं में रच-पच गई थी। इत्यलम् में उन्होंने कहा—

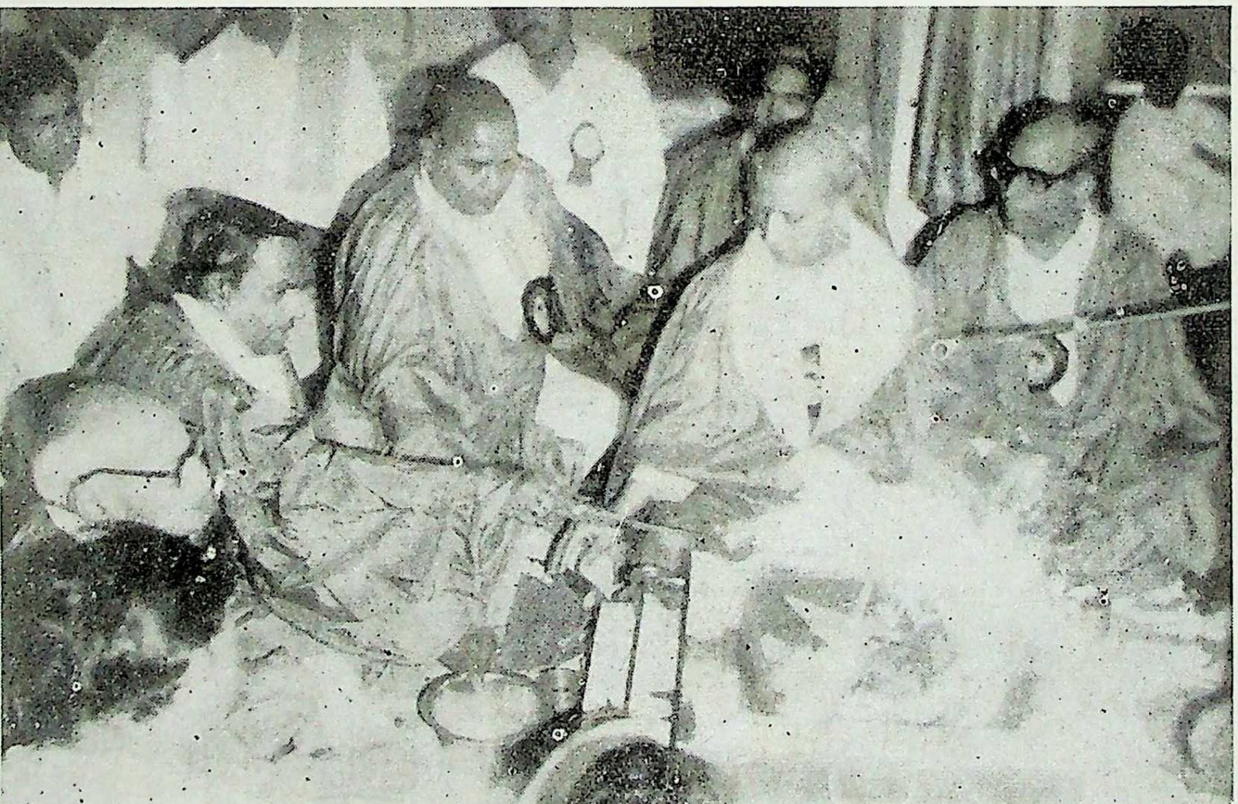
**तुम जो महलों में बैठे दे सकते हो आदेश,**
**मरने दो बच्चे, ले आओ खींच पकड़कर केश,**
**नहीं देख सकते निर्धन के घर दो मुट्ठी धान,**
**सुनो तुम्हें ललकार रहा हूँ, सुनो घृणा का गान।**

सैनिक, विशाल भारत, प्रतीक, दिनमान, नवभारत जैसी पत्रिकाओं का सम्पादन कर अज्ञेय ने न केवल आज़ादी की लड़ाई का शिविर लगाया अपितु देश-विदेश की राजनीतिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक रपट तैयार करवाने में हिन्दी को विश्वभाषा का रूप देने का उद्यम किया। शब्दों को गढ़ा और दृश्य-श्रव्य के माध्यम के रूप में हिन्दी की विश्वसनीयता बढ़ाई। १९५५ में यूनेस्को के निमन्त्रण पर यूरोप गए तथा विश्व के बड़े कवि-लेखकों से मिले। १९६१ में केलिफोर्निया में भारतीय संस्कृति और साहित्य के प्रोफेसर नियुक्त हुए तथा फिर रूमानिया, युगोस्लाविया, रूस, मंगोलिया, जापान, आस्ट्रेलिया की यात्रा कर भारतीय साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन किया। जोधपुर विश्वविद्यालय में



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri



दीक्षान्त-समारोह पर यज्ञ करते हुए माननीय वीरबहादुर सिंह, मुख्यमन्त्री उत्तर प्रदेश, कुलाधिपति डा० सत्यकेतु विद्यालंकार, कुलपति श्री रामचन्द्र शर्मा, आचार्य प्रो० रामप्रसाद वेदालंकार तथा कुलसचिव डा० वीरेन्द्र अरोड़ा।

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri




दीक्षान्त-समारोह, दाएँ से—कुलसचिव श्री वीरेन्द्र अरोड़ा, कुलपति श्री रामचन्द्र शर्मा से विचार-विमर्श करते हुए। कुलाधिपति डा० सत्यकेतु विद्यालंकार तथा मुख्यमन्त्री उत्तर प्रदेश, माननीय श्री वीरबहादुर सिंह जी (मुख्य-अतिथि) के साथ शिष्ट परिषद् के मान्य सदस्य मंच पर विराजमान हैं।

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भारतीय भाषा और साहित्य विभाग के निदेशक-आचार्य भी रहे। एक जगह घुमक्कड़ अज्ञेय रहे ही नहीं। इसीलिए उन्हें यायावर या परिव्राजक कहा जाए तो अनुचित न होगा। उपन्यास, कहानी, कविता, निबन्ध, गद्यगीत, आलोचना, फोटोग्राफी, बागवानी, चर्मशिल्प, मृत्तिका प्रतिमानिर्माण, पर्वतारोहण, सिलाईकला तथा सम्पादन जैसी बहुआयामी वृत्तियों के धनी इस कलाकार को देखकर लगता था कि अनेक को एक में साधने की कला कोई इनसे सीखे। उन्हें कई राष्ट्रीय पुरस्कार मिले। 'कितनी नावों में कितनी बार' रचना पर ज्ञानपीठ, आँगन के पार द्वार पर साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला। मरणोपरांत उत्तर प्रदेश ने एक लाख रुपये का भारत-भारती पुरस्कार दिया। ज्ञानपीठ पुरस्कार की विपुल राशि से 'वत्सल निधि' की स्थापना कर नवोदित प्रतिभाओं के विकास के लिए कई कार्यक्रम आयोजित किए। सम्पूर्ण देश में लेखक-शिविर लगाए।

अज्ञेय हिन्दी में प्रयोगवाद के जन्मदाता हैं। तारसप्तक के सम्पादन से उन्होंने हिन्दी में कविता और उसकी भाषा को एक नया मोड़ दिया। वैज्ञानिक युगबोध, आधुनिकता, व्यक्तिगत अभाव और कुंठा, यौनचेतना, सामाजिक विसंगति, कला और क्षतिपूर्ति, क्षणवाद, नैतिकता, मूल्य और उद्देश्य, राग तथा बौद्धिकता जैसे विषयों पर उन्होंने रचनाएँ लिखीं। उन्होंने व्यक्तिचेतना और समाजबोध को अलग करके नहीं देखा, उन्होंने लिखा—

**सूरज का जपा फूल सागर हाथों**
**अम्बा तिमिरमयी को नैवेद्य चढ़ चला।**

*　　　　*

**यह दीप अकेला स्नेह भरा**
**है गर्व भरा मदमाता पर**
**इसे भी पंक्ति को दे दो।**

अज्ञेय का साहित्यिक जीवन १९३३ से प्रारम्भ हुआ, भग्नदूत के प्रकाशन के साथ। फिर चिन्ता, तारसप्तक, इत्यलम्, हरी घास पर क्षणभर, बावरा अहेरी, इन्द्रधनुष रौंदे हुए ये, अरी ओ करुणा प्रभामय, आँगन के पार द्वार, कितनी नावों में कितनी बार, क्योंकि मैं उसे जानता हूँ, सागरमुद्रा, पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ, पूर्वा, सुनहले शैवाल, जैसे संकलन निकले। हिन्दी साहित्य : एक आधुनिक परिदृश्य, भवंती, अंतरा, जोगलिखी, संवत्सर तथा अद्यतन जैसे निबन्धसंकलन प्रकाशित हुए। शेखर एक जीवनी, नदी के द्वीप, अपने-अपने अजनबी जैसे उपन्यास छपे जो हिन्दीउपन्यासों की श्रृंखला में नया विषय तथा नया शिल्प लेकर आए थे। १९५९ में नेहरू अभिनन्दन ग्रन्थ का सम्पादन कर, १९४६ में प्रतीक का सम्पादन कर तथा १९६५ में दिनमान का सम्पादन कर उन्होंने सांस्कृतिक अभियान तथा संगठनशक्ति का परिचय दिया।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अज्ञेय का काव्य हिन्दी में एक बृहत्तर माध्यम की खोजयात्रा कहा जा सकता है। नये प्रतीक और मिथक, नये बिम्ब और भाषामुद्रा, तीव्र संवेग और कल्पना तथा जीवंत भावानुभवों ने उनकी कविताओं को समृद्ध बनाया है। 'जोग लिखी' में कहीं उन्होंने लिखा है—'हर कृतिकार कृति के द्वारा मुक्त होता है। अगर उस मुक्ति का लाभ और बोध उसको नहीं होता तो फिर उसने जो लिखा है, वह रचना नहीं है।'

**लम्बे सर्जना के क्षण कभी भी हो नहीं सकते**
**बूँद स्वाती की भले हो।**
**बेधती है मर्म सीपी का उसी निर्मम त्वरा से,**
**वज्र जिससे फोड़ता चट्टान को,**
**भले ही फिर व्यथा के तम में,**
**बरस पर बरस बीते,**
**एक मुक्ता रूप को पकते।**

अज्ञेय ने मनुष्य की मुक्ति के लिए गुहार लगाई। रूढ़ियों और अज्ञान से जूझते मनुष्य को ऊपर उठाने का संकल्प लिया। हर टूटते किन्तु सतत संघर्षरत व्यक्ति के प्रति उनकी हमदर्दी है। सामाजिक न्याय के लिए खड़े होने वाले के साथ वह खड़े हैं। अज्ञेय की यही अपनी पहचान है और इसीलिए उनकी कविता जीवित रहेगी—

**क्योंकि जिसने कोड़ा खाया है**
**वह मेरा भाई है,**
**क्योंकि यों मैं उसकी मार से तिलमिला उठा हूँ,**
**इसके लिए मैं उसके साथ नहीं चीखा चिल्लाया हूँ,**
**मैं उस कोड़े को छीन कर तोड़ दूँगा।**
**मैं इंसान हूँ और इंसान वह अपमान नहीं सहता।**

---

## संग्रहालय अंक

गुरुकुल विश्वविद्यालय का संग्रहालय पुरातत्त्व, भारतीय संस्कृति और इतिहास की सुन्दर धरोहर है। इसका उद्घाटन पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने किया था। प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता डा० वासुदेवशरण अग्रवाल भी उस समय उपस्थित हुए थे। प्रो० हरिदत्त वेदालंकार, डा० गंगाराम जी गर्ग तथा डा० बिनोदचन्द्र सिन्हा ने अपने कार्यकाल में इसकी उन्नति के लिए बड़ा परिश्रम किया। सम्प्रति इसके निदेशक डा० जबरसिंह सेंगर हैं।

इस अंक में दी गई सामग्री से गुरुकुल संग्रहालय का परिचय प्राप्त होगा। इसके लिए संग्रहालय के निदेशक डा० जबरसिंह सेंगर तथा संग्रहालयाध्यक्ष डा० सूर्यकान्त श्रीवास्तव को हम विशेषरूप से धन्यवाद देते हैं।

**—डा० विष्णुदत्त राकेश**

---



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

# जिहाद का झंडा

—कुमार हिन्दी *

बुजुर्गों ने नौजवानों के कत्लेआम का
हुक्म दे दिया है।
उनका बस चले तो वह नौजवानों को
बुजुर्ग बना दें
जवानी का जवानी में खून कर दें
नौजवान इसे खूब समझते हैं
वह विद्रोह करते हैं
क्या कत्लेआम के हुक्म के खिलाफ़
विद्रोह करना जुर्म है ?
क्या आत्मरक्षा करना गुनाह है ?
उठो, दकियानूसी सत्ता के विरुद्ध
जिहाद का झंडा बुलन्द करो
पाखण्ड और धर्मान्धता का विनाश करो
बुजु.र्ग जिज्ञासा का हनन करते हैं
खुले चिन्तन का ह्रास करते हैं
उठो, रूढ़ियों को तोड़ो
पुराने ढर्रों से मुक्त हो
मूर्खों से, पाखण्डियों से, लोहा लेना होगा !
भ्रष्टाचार का मुकाबला करना होगा !
अकेले पड़ सकते हो
दुरदुराए जा सकते हो
धमकाए जा सकते हो
सताए जा सकते हो
लेकिन, अन्याय सहन करना महापाप है
नौजवानों,
तुम्हें भविष्य बुला रहा है
भविष्य की झाँकी देखो
अपने कत्लेआम के हुक्म के विरुद्ध
जिहाद का झंडा बुलन्द करो।

* *

---

* **श्री बलभद्रकुमार हूजा 'कुमार हिन्दी'**
पूर्व कुलपति, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

# नाम

—कुमार हिन्दी

नाम !
निमानियों का मान है
नितानियों की तान है
निराश्रितों का आश्रय
निस्सहायों का सहाय
दलितों की आशा
पतितों का उद्धारक
क्योंकि उनका कोई और तो है नहीं
लेकिन
केवल नाम ही नाम
अनस्थीसिया है
ट्रांक्विलाइज़र है
क्या नाम ने
सोमनाथ के पुजारियों की रक्षा की ?
मुहम्मद शाह रंगीले की रक्षा की ?
सिराजुद्दौला की रक्षा की ?
नाम मदद करता है
महमूद ग़ौरी की,
नादिरशाह की,
राबर्ट क्लाइव की !
हाँ, नाम भक्तों को हौंसला प्रदान करता है—
नाम ने हौंसला प्रदान किया
ईसा मसीह को
गुरु अर्जुनदेव को
गुरु तेग़बहादुर को
शहीदे आज़म भगतसिंह को
राजगुरु, सुखदेव, वीर हरिकृष्ण को ।
नाम
शान्ति भी, शक्ति भी प्रदान करता है
तब, जब जुबान पर नाम हो
हाथ में तलवार हो ।

———



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

# उत्तराखण्ड में लोकशिक्षण का एक नया केन्द्र

डा० कृष्णदत्त वाजपेयी
पूर्व अध्यक्ष, प्राचीन भारतीय इतिहास विभाग, सागर विश्वविद्यालय

वर्तमान युग में संग्रहालयों की उपादेयता की ओर लोगों का ध्यान गया है। यूरोप और अमेरिका में तो विविध प्रकार के संग्रहालयों की संख्या बहुत बड़ी है और दिन पर दिन उसमें वृद्धि होती जा रही है। वहाँ प्राय: प्रत्येक नगर में एक न एक सार्वजनिक संग्रहालय मिलेगा। शिक्षा-संस्थाओं के अपने संग्रहालय अलग होते हैं, जिनमें विद्यार्थियों के उपयोग की वस्तुएँ प्रदर्शित रहती हैं। पश्चिमी देशों में बहुत-से संग्रहालय ऐसे मिलेंगे जो व्यक्तियों के द्वारा अपने निजी धन से स्थापित किए गए हैं। दुर्भाग्य से हमारे देश में इस दिशा में बहुत कम प्रगति हुई है। सारे भारत में सभी प्रकार के सार्वजनिक संग्रहालयों की संख्या १५० से अधिक न होगी। इनमें से भी बहुत-से केवल नाम के ही मिलेंगे। हमारे यहाँ के संग्रहालयों की सामग्री का वैसा उपयोग भी नहीं होता जैसा कि पश्चिम में हो रहा है। भारत के विभिन्न प्रदेशों में स्थापत्य, मूर्तिकला एवं चित्रकला के अवशेष तथा प्राचीन सिक्के, हस्तलिखित ग्रन्थ आदि वस्तुएँ बहुत बड़ी संख्या में बिखरी पड़ी हैं। इनमें से बहुत कृतियाँ नष्ट हो रही हैं। शासन तथा जनता को अब इस ओर शीघ्र ध्यान देना चाहिए, जिससे हमारी यह प्राचीन धरोहर नष्ट होने से बच सके तथा उसका यथोचित उपयोग किया जा सके।

भारत में संग्रहालयों की संख्या तथा उनकी उत्तरोत्तर उन्नति की दृष्टि से उत्तर प्रदेश का स्थान अग्रगण्य है। पिछले अनेक वर्षों में इस दिशा में बहुत कुछ प्रगति हुई है, जिसका मुख्य श्रेय इस प्रदेश के विद्वान् पूर्व शिक्षामंत्री डा० सम्पूर्णानन्द जी को है। १९४७ ई० में उन्होंने इस प्रदेश के सार्वजनिक संग्रहालयों की दशा सुधारने एवं उनमें वृद्धि करने के उद्देश्य से एक संग्रहालय समिति की स्थापना की थी। इस समिति ने जो अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की वह अब धीरे-धीरे कार्यान्वित हो रही है।

समिति ने इस प्रदेश के जिन नगरों में नये संग्रहालयों की स्थापना की सिफारिश की है उनमें एक हरिद्वार भी है। यह नगर हिन्दुओं के मुख्य तीर्थ स्थानों में है। प्रति-वर्ष यहाँ भारत के कोने-कोने से बहुत बड़ी संख्या में लोग आते हैं, कुम्भ तथा अर्ध-कुम्भ



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

के अवसर पर इन दर्शकों की संख्या बहुत अधिक हो जाती है। सौभाग्य से हरिद्वार की मुख्य शिक्षासंस्था गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय ने भी अपने यहाँ के 'वेद मन्दिर' में एक संग्रहालय की स्थापना की है, जिसे उत्तर प्रदेशीय सरकार ने भी मान्यता दी है। इस संग्रहालय में चार विभाग हैं—१. मूर्तिकला विभाग, २. चित्रकला विभाग, ३. सिक्कों का विभाग ४. विविध वस्तुओं का विभाग।

मूर्ति विभाग में उत्तराखंड के विविध स्थानों से प्राप्त अनेक मूर्तियाँ प्रदर्शित हैं। ये मुख्यत: पूर्वमध्यकाल तथा उत्तरमध्यकाल की हैं। इनमें महिषमर्दिनी दुर्गा, शिव, विष्णु, ब्रह्मा, जैन तीर्थङ्करों आदि की मूर्तियाँ हैं। चतुर्मुखब्रह्मा का एक सिर भी यहाँ प्रदर्शित है जिसका अलंकृत जटाजूट तथा मुखों की मुद्रा अत्यन्त सुन्दर है। यह कलाकृति ईस्वी आठवीं शताब्दी के अन्त की है। हाल में मिट्टी की भी कुछ मूर्तियाँ संग्रहालय के लिए उपलब्ध हुई हैं, जो मौर्यकाल से लेकर गुप्तकाल तक की हैं। सहारनपुर जिले के झींवरहेड़ी नामक स्थान से एक शिलापट्ट मिला है जिसमें देवताओं और असुरों के द्वारा समुद्र-मन्थन का दृश्य बड़ी सजीवता के साथ अंकित किया गया है।

चित्र विभाग में पहाड़ी कला के अनेक चित्र प्रदर्शित हैं। इनमें से कुछ चित्र उच्च-कोटि के भी हैं। टिहरी-गढ़वाल की रियासत में (जो अब उत्तर प्रदेश का एक जिला बन गयी है) १८वीं और १९वीं शती में चित्रकला की पहाड़ी शैली का अच्छा विकास हुआ। मुगल दरबारों में रहने वाले अनेक चित्रकार टिहरी नरेशों के संरक्षण में रहे थे। उनके तथा उनके वंशजों के द्वारा पहाड़ी चित्रकला को बहुत प्रोत्साहन मिला। इस शैली के कितने ही चित्र अब भी पूर्वी पंजाब, टिहरी-गढ़वाल, गढ़वाल तथा अल्मोड़ा जिले के विभिन्न स्थानों में पड़े हुए हैं। अच्छा हो यदि इनमें से कुछ चुने हुए चित्रों का संग्रह हरिद्वार के संग्रहालय में किया जा सके।

हाल में गुरुकुल संग्रहालय के कार्यकर्ताओं ने कनखल के कुछ भित्तिचित्रों का संग्रह अपने यहाँ किया है। ये चित्र 'निर्मला अखाड़ा' नामक एक बड़ी इमारत की दीवारों पर मिले हैं। इनमें से कुछ १९वीं शताब्दी के प्रारम्भ के तथा कुछ मध्य के बने हुए हैं। मुझे संग्रहालय के मन्त्री श्री हरिदत्त वेदालंकार के साथ इन भित्तिचित्रों को देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ और इन्हें देखने पर तत्कालीन चित्रकला की एक झाँकी मिली। इस कला में मुगल, पहाड़ी तथा यूरोपीय शैलियों का अच्छा सम्मिश्रण हुआ है। कुछ चित्रों में रंग, रेखा, वर्ण्यविषय तथा भाव की ओर कलाकारों ने काफी ध्यान दिया है। झूला झूलती हुई स्त्रियाँ, विविध राग-रागनियों के चित्र, पौराणिक दृश्य, राजाओं की शोभायात्रा, आदि विभिन्न विषय इनमें मिलते हैं। मुख्य भित्तिचित्रों के प्रतिचित्र बनवा कर संग्रहालय में प्रदर्शित कर दिए गए हैं। इनमें आसावरी रागिनी, सुक के साथ क्रीड़ा करती हुई वनिता, विरहिणी नायिका, होली का दृश्य, राम का अभिषेक, शृङ्गार में तल्लीन स्त्री तथा विविध नायिकाओं के चित्र उल्लेखनीय हैं।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

संग्रहालय में सिक्कों का विभाग भी दर्शनीय है। इस विभाग में प्रारम्भिक आहत सिक्कों से लेकर अर्वाचीन काल तक के सिक्के प्रदर्शित हैं। विदेशों के सिक्कों का भी अच्छा संकलन किया गया है। विभिन्न कालों के अनुसार सिक्के अलग-अलग रक्खे गए हैं।

चौथे विभाग के अन्तर्गत विविध मानचित्र, लिपिपत्रक आदि हैं। ब्राह्मी, खरोष्ठी आदि प्राचीन लिपियों के लगभग ६० चार्ट अब तक तैयार हुए हैं जो कि कालक्रमानुसार भवन में प्रदर्शित किए गए हैं।

संग्रहालय की स्थापना तथा उसकी समृद्धि में इन पंक्तियों के लेखक ने सहयोग देकर अपना श्रम सफल किया है।

वस्तुत: यह संग्रहालय एक बड़ी कमी को दूर करता है। इसके द्वारा गुरुकुल विश्वविद्यालय तथा हरिद्वार की अन्य शिक्षासंस्थाओं में पढ़ने वाले विद्यार्थियों का लाभ तो होता ही है, जनसाधारण भी इससे लाभान्वित होते हैं। संग्रहालय के संचालक ने इस बात का ध्यान रक्खा है कि उसमें संग्रहीत सामग्री का पूरा उपयोग प्रादेशिक इतिहास के अन्वेषण में किया जाए। उनका यह भी उद्देश्य है कि इस संग्रहालय के द्वारा शिक्षण का कार्य अग्रसर हो तथा जनसाधारण का ध्यान भारत के प्राचीन गौरव की ओर आकर्षित हो। उत्तरप्रदेशीय सरकार ने हाल में प्रादेशिक संग्रहालय निर्माण की जो महत्त्वपूर्ण योजना बनायी है उसकी पूर्ति की ओर गुरुकुल संग्रहालय अग्रसर है। आशा है कि शासन एवं जनता के सहयोग से उत्तराखण्ड के सम्बन्ध में पुरातत्त्व, नृतत्व, चित्रकला आदि की यथेष्ठ सामग्री इस संग्रहालय में शीघ्र संकलित हो सकेगी, जिसके द्वारा विशेषकर इस प्रदेश के अज्ञात इतिहास पर बहुत कुछ प्रकाश पड़ सकेगा।

---



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

# पुरातत्व संग्रहालय : संक्षिप्त परिचय

डा० बिनोदचन्द्र सिन्हा

प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, प्रा०भा० इतिहास, संस्कृति तथा पुरातत्व विभाग

विश्वविद्यालय परिसर में दयानन्द द्वार से लगभग १०० मीटर पूर्व की ओर संग्रहालय भवन अवस्थित है। पीले रंग में पुता हुआ यह दोमंजिला भवन अपने विस्तार के लिए तीसरी मंजिल के निर्माण की प्रतीक्षा कर रहा है। इस भवन में संग्रहालय वर्तमान दशक के प्रारम्भ में ही नियोजित किया गया था किन्तु अपने अतीत में यह लगभग ८० वर्षों का इतिहास सँजोए है।

संग्रहालय शब्द अंग्रेजी शब्द म्यूजियम का हिन्दी रूपान्तर है। म्यूजियम ग्रीक देवी म्यूज के नाम से बना है। ग्रीक गाथाओं में म्यूज ललितकलाओं की देवी के रूप में प्रतिष्ठित है।

**स्थापना और विकास**

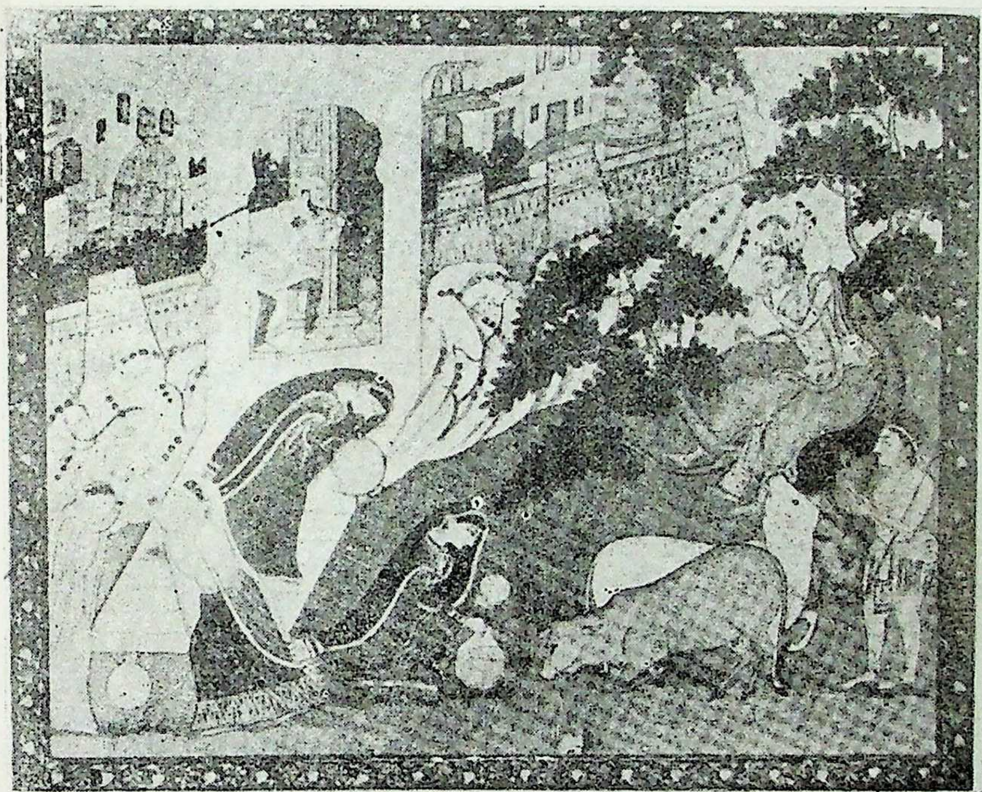
स्वामी श्रद्धानन्द जी की प्रेरणा से इस संग्रहालय की स्थापना १९०७–८ में गंगा पार पुण्यभूमि पर हुई। संग्रहालय की स्थापना के पीछे उस समय मूल भावना यह थी कि यह विद्यार्थियों के अध्ययन में सहायक हो तथा साधारण जनता में भी विभिन्न विषयों के प्रति रुचि उत्पन्न हो। शिक्षाप्रसार के साधन के रूप में संग्रहालय की उपयोगिता प्रमाणित है। अनेकों ग्रन्थों के पढ़ने के बाद जो विद्या उपार्जित की जाती है, थोड़े ही समय में उसका सामान्य ज्ञान संग्रहालय बड़ी सुगमता से करा देता है। बच्चों के मनोरंजन तथा ज्ञानवर्धन के लिए तो संग्रहालय की उपयोगिता सर्वमान्य है। अतः १९४५ में जब संग्रहालय का पुनर्गठन किया गया तब ऐतिहासिक वस्तुओं के संग्रह पर विशेष बल दिया गया। मार्च १९५० में गुरुकुल की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर वेद मन्दिर में वर्तमान संग्रहालय का उद्घाटन किया गया। उद्घाटन करते हुए प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता स्वर्गीय डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ने इस संग्रहालय के उज्ज्वल भविष्य की कामना की।

वर्ष १९७२ में संग्रहालय को विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति तथा पुरातत्त्व विभाग का अंग बना दिया गया। इस विभाग के अध्यक्ष संग्रहालय के पदेन



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri



**पनघट पर कन्हैया—पहाड़ी शैली का एक चित्र (१९वीं शती)**
(गुरुकुल संग्रहालय कलादीर्घा से)

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri



**समुद्र मंथन का पाषाण-फलक**

पुरातत्व संग्रहालय को यह फलक ग्राम झींवरहेड़ी (सहारनपुर) से प्राप्त हुआ। इस फलक में कच्छप पर मन्दराचल पर्वत की मथानी है जिसमें शेषनाग रज्जु के स्थान पर लपेटा गया है। फलक में दायीं ओर एक देवता और बायीं ओर आठ दैत्य खड़े हुए समुद्र का मन्थन कर रहे हैं। फलक में शेषनाग का मुँह देवताओं की ओर तथा पूँछ दैत्यों की ओर स्पष्ट है। यह फलक लंदन के भारतोत्सव के अन्तर्गत प्रदर्शनी में रखा गया था।

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri



कांगड़ी ग्राम (बिजनौर) से प्राप्त आसवपायी कुबेर (९-१०वीं शती ई०)
(गुरुकुल संग्रहालय)

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

निदेशक नियुक्त किए गए। १९८१ में संग्रहालय अपने वर्तमान नवीन भवन में स्थानांतरित कर दिया गया।

अल्पकाल में गुरुकुल संग्रहालय ने जो उन्नति की है उसकी सराहना देश के अनेक विद्वानों और पुरातत्त्ववेत्ताओं ने मुक्तकण्ठ से की है। प्रतिवर्ष हजारों धर्मपरायण यात्री हरिद्वार पावन गंगा में स्नान करने आते हैं, उनके लिए यह संग्रहालय स्वस्थ मनोरंजन एवं ज्ञानवर्धन का महत्त्वपूर्ण साधन बन गया है। विद्यार्थियों तथा शिक्षितवर्ग की ज्ञानपिपासा की शान्ति के लिए इतिहास, पुरातत्त्व, अभिलेखशास्त्र, मुद्राशास्त्र आदि की विविध सामग्री संग्रहालय में विद्यमान है। लगभग पूरे वर्ष दर्शकों की चहल-पहल से संग्रहालय भवन व्याप्त रहता है। पंचपुरी-हरिद्वार की विभिन्न शिक्षण-संस्थाएँ अपने छात्रों को क्रियात्मक ज्ञान देने के लिए गुरुकुल संग्रहालय का उपयोग कर रही हैं। देहरादून, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, चण्डीगढ़, हरियाणा आदि की छात्र-मण्डलियाँ भी अपनी सरस्वती-यात्राओं में इसे देखने प्रतिवर्ष आया करती हैं।

वर्ष १९५२ में गुरुकुल के पास ही बहादराबाद में खुदाई कराने वाले पुरातत्व विभाग के उत्खनन शाखा के अधीक्षक डा० यज्ञदत्त शर्मा ने वहाँ से प्राप्त प्रागैतिहासिक अवशेषों को जब गुरुकुल के संग्रहालय में दिखाया तो उपस्थित लोगों की आस्था सहज रूप में अपनी प्राचीन संस्कृति में जागृत हो उठी। पुरातत्व, कला, संस्कृति तथा इतिहास आदि विषयों पर संग्रहालय द्वारा आयोजित व्याख्यानों में देश के जाने-माने विद्वान आमंत्रित किये जाते हैं।

इस संग्रहालय ने स्थानीय कला को सुरक्षित रखने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। कनखल की अनेक इमारतों पर १९वीं शती के भित्तिचित्र हैं। इन चित्रों में कुछ ईस्ट इण्डिया शैली के हैं। चित्रों से यह स्पष्ट है कि इनका निर्माण बहुत कुशल हाथों से नहीं हुआ, फिर भी कहीं-कहीं उत्तम कला के उदाहरण दृष्टिगोचर होते हैं। रामाभिषेक, झूले की नारियाँ, राजाओं की शोभायात्रा, समुद्रमन्थन तथा राधा-कृष्ण के चित्रों में प्राचीन कांगड़ा शैली के तत्व पाये जाते हैं। गुरुकुल संग्रहालय ने इन भित्तिचित्रों के कुछ फोटो भी तैयार करवाये हैं। इस प्रकार भावी संतति के लिए एक लुप्त होती हुई कला को सुरक्षित रखने का प्रयास किया गया है।

**प्रागैतिहासिक सामग्री**

इसमें मोहनजोदेड़ो, हड़प्पा तथा कालीबंगा से प्राप्त सामग्री प्रदर्शित की गई है। प्रागैतिहासिक काल के ताँबे के हथियार, मंगलौर तहसील जिला सहारनपुर के निकट नसीर पुर नामक एक गाँव से डा० देशपाण्डे को उत्खनन द्वारा प्राप्त हुए थे। इनमें काँटेदार बर्छी, हारपून्स, कुल्हाड़ी आदि नौ हथियार हैं। इन हथियारों का प्रयोग तत्कालीन मानव अपनी



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रतिदिन की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु करता था। इन्हें गंगा घाटी के हथियार के नाम से भी पुकारा जाता है। ये हथियार सम्भवतः १८वीं शती ई०पू० के हैं।

सिन्धु घाटी सभ्यता से सम्बन्धित सामग्री में मिट्टी की मूर्तियाँ, मृत्तिका पात्र, खिलौने आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। मिट्टी की मूर्ति में मातृदेवी की मूर्ति अपना विशेष स्थान रखती है। यद्यपि कला की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण नहीं है, इसमें शरीरसौष्ठव नहीं है। गले में हार है, आँख और स्तन अलग से मिट्टी के टुकड़े चिपकाकर बनाये गए हैं। धार्मिक दृष्टि से इनका महत्व अवश्य ही रहा होगा क्योंकि ये मूर्तियाँ उपासना की दृष्टि से बनाई गई होंगी। खिलौनों में कुत्ते, हाथी आदि की मूर्तियाँ उल्लेखनीय हैं। कालीबंगा राजस्थान से प्राप्त सामग्री में मृत्तिका पात्रों के टुकड़े, खिलौने तथा हाथीदांत से बनी हुई वस्तुएँ हैं। मृत्तिका पात्रों के टुकड़ों पर सिन्धु सभ्यता की भाँति काले रंग से रेखाँकन किया गया है। ये भूरे रंग के हैं। खिलौनों की आकृति भी सिन्धु सभ्यता से साम्य रखती हैं।

**तक्षण कृतियाँ**

इस संग्रहालय की तक्षणदीर्घा में करीब ३५० प्रस्तर तथा धातु प्रतिमाएँ संग्रहीत हैं। इनमें प्रमुख रूप से कुषाणकाल से लेकर मध्यकाल तक की हिन्दू, बौद्ध तथा जैन मूर्तियाँ हैं। ये मूर्तियाँ अधिकतर हरिद्वार के आसपास के क्षेत्रों से संग्रहीत की गई हैं। कुषाणकालीन मूर्तियाँ लाल चित्तीदार पत्थर पर उत्कीर्ण की गई हैं। ये मूर्तियाँ सौन्दर्य-प्रदर्शन के अतिरिक्त भावभंगिमा तथा शिल्पकारी की दृष्टि से उत्कृष्ट कला की परिचायक हैं। इन मूर्तियों में शीर्षहीन बुद्ध, गजलक्ष्मी, शेषशायी विष्णु, स्तम्भ के सहारे स्त्री तथा एकमुख शिवलिंग आदि मूर्तियाँ विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं।

गुप्तकालीन मूर्तियों में बुद्ध का सिर, शेषशायी विष्णु तथा महिषासुरमर्दिनी की मूर्तियाँ उच्चस्तरीय हैं। ये मूर्तियाँ अधिकतर हरिद्वार के आसपास के क्षेत्रों से संग्रहीत की गई हैं।

हिन्दू धर्म से सम्बन्धित मूर्तियों में विष्णु, त्रिमूर्ति, हरिहर, कुबेर, सिंहवाहिनी दुर्गा, शिव-पार्वती तथा समुद्रमंथन आदि उल्लेखनीय हैं। मध्यकालीन बुद्ध की मूर्तियों में पद्मपाणि बुद्ध की प्रतिमा और बुद्ध के पार्श्व में चावरधारी परिचायिकाओं तथा उड़ते हुए गंधर्वों को दर्शाया गया है। जैन मूर्तियों में चौबीसवें तीर्थंकर महावीर जी की शीर्षहीन मूर्ति, जैन मन्दिर का शिखर उल्लेखनीय है। इस संग्रहालय का समुद्र मंथन का पाषाणफलक लन्दन में हुए "भारत उत्सव" वर्ष १९८२ में प्रदर्शित किया गया। गुरुकुल के लिये यह बड़े गौरव की बात है।

पाषाणप्रतिमाओं के अतिरिक्त करीब ११५ धातु प्रतिमाएँ भी संग्रहालय में संग्रहीत हैं। इनमें विविध धातुओं से युक्त विष्णु, लक्ष्मी और दुर्गा आदि की मूर्तियाँ



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

उल्लेखनीय हैं। ये सभी मूर्तियाँ अधिकतर अष्टधातु से निर्मित हैं। इसी प्रसंग में उल्लेखनीय है कि दिल्ली के मेसर्स शान्ति विजय कम्पनी ने ९२ अष्टधातु की मूर्तियाँ उपहारस्वरूप प्रदान कीं। स्वर्गीय डा० बी०एन० शर्मा के सहयोग से इन मूर्तियों को प्राप्त करने का श्रेय लेखक को है।

**मृण्मूर्तियाँ**

भारतीय इतिहास के निर्माण में मृण्मूर्तियों का विशेष योगदान रहा हैं। इस संग्रहालय में ३९३ मृण्मूर्तियाँ संग्रहीत हैं, जो मौर्यकाल से लेकर गुप्तकाल तक की हैं। इनका संग्रह प्रमुख रूप से मथुरा, कौशाम्बी तथा समीपवर्ती स्थानों से किया गया है।

मथुरा से प्राप्त मौर्यकालीन मृण्मूर्तियाँ काली हैं। भूरी मिट्टी से निर्मित हैं। मौर्यकालीन मृण्मूर्तियों में मातृदेवी की मूर्तियाँ उल्लेखनीय हैं। गले में पड़ी माला तथा शरीर के अवयव देखकर स्पष्ट प्रतीत होता है कि ये अलग से बनाकर चिपकाये गये हैं। शुंगकालीन मूर्तियाँ उत्कृष्ट कला की द्योतक हैं। अधिकाँश रूप में सभी मृण्मूर्तियाँ साँचे से ढालकर बनाई गई हैं। ये मूर्तियाँ सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति पर प्रभाव डालने के साथ-साथ कला के विकास और उत्कर्ष की भी द्योतक हैं।

कुषाणकालीन मृण्मूर्तियाँ सौन्दर्य की दृष्टि से शुंगकालीन मृण्मूर्तियों से हीन हैं। कुषाणकालीन मृण्मूर्तियों में पंखदार पगड़ी धारण किए हुए पुरुष मस्तक, दोनों हाथ जोड़े पूजा भाव में मिट्टी से बनी पुरुष की मूर्ति में केश घुँघराले ओर गले में माला है। त्रिशूल धारण किए हुए देवी की मूर्ति आदि दर्शनीय हैं।

गुप्तकालीन मृण्मूर्तियों का उत्तम संग्रह इस संग्रहालय में है। हाथ से निर्मित मृण्मूर्तियाँ केश-विन्यास, भावभंगिमा, वस्त्राभूषण आदि की दृष्टि से कला की सर्वोत्तम उपलब्धियाँ हैं। ये तत्कालीन समाज एवं धर्म के विभिन्न पहलुओं पर भी प्रकाश डालती हैं। इन मूर्तियों में मेखला धारण किए हुए तथा दोनों हाथ कमर पर रखे हुए स्त्री-प्रतिमा का धड़, कलापूर्ण ढंग से केश-विन्यास किए हुए तथा कानों में कुण्डल धारण किए हुए स्त्रीप्रतिमा का सिर तथा शिव-पार्वती की खण्डित मूर्तियाँ उल्लेनीय हैं।

**मृतिका पात्र**

इस संग्रहालय में विभिन्न प्रकार के मृतिका पात्र भी संहीत हैं। प्राचीन स्थानों की खुदाई में विभिन्न प्रकार के मिट्टी के बर्तन और ठीकरे प्राप्त हुए हैं। इनमें कटोरा, कुल्हड़, कुण्डे, तश्तरी, बट्टे और भिक्षापात्र आदि मुख्य हैं।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मृतिका पात्र विभिन्न स्थानों, जैसे मोहनजोदेड़ो, हड़प्पा, कालीबंगा, कुन्दनपुर (सहारनपुर), मंडावर (बिजनौर), नसीरपुर (सहारनपुर), राखीगढ़ (हिसार), मित्ताथल (भिवानी) आदि स्थानों से संग्रहीत किए गए हैं।

**मुद्रा कक्ष**

प्राचीन भारतीय इतिहास के निर्माण में सिक्कों ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इनसे तत्कालीन राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा आर्थिक दशा का अच्छा परिचय होता है। प्राचीन भारतीय इतिहास में अनेक ऐसे स्थल हैं जिनकी जानकारी केवल सिक्कों के माध्यम से ही हुई है। राजनीतिक परिवर्तनों के साथ ही ये सिक्के विभिन्न नामों से पुकारे गए हैं; जैसे निष्क, शतमान, दीनार, मोहर एवम् रुपया आदि।

आरम्भिक आहत सिक्कों से लेकर अर्वाचीन काल तक के सिक्के प्रदर्शित किए गए हैं। सिक्कों में उत्तरमौर्यकाल में ढाले गए सिक्के, इण्डोग्रीक राजाओं के सिक्के, पश्चिमी क्षत्रपों के सिक्के, कुषाण राजाओं के सिक्के, राष्ट्रकूट एवन् यौधेयों के सिक्के, गुप्तवंशी राजाओं के सिक्के, कन्नौज के गुर्जर राजाओं के सिक्के, मध्यकालीन मुगलों के सिक्के, ब्रिटिशकालीन भारत के सिक्के तथा स्वतन्त्रता से पूर्व विभिन्न देशी रियासतों के सिक्के अपना विशिष्ट महत्व रखते हैं।

**पाण्डुलिपि कक्ष**

संग्रहालय में हस्तलिखित ग्रन्थों का भी संग्रह है। इनमें सभी धर्मों को प्रतिपादित करने वाले हस्तलिखित ग्रन्थों के संग्रह का प्रयास किया गया है।

हिन्दू धर्म के पवित्र ग्रन्थों में बाल्मीकिकृत रामायण, महाभारत के कई प्रकार के संस्करण, काश्मीरी (शारदा) लिपि में लिखित प्रार्थनापुस्तक, बंगलाभाषा में लिखित देवी-स्त्रोत, १६वीं शती के लगभग तिब्बती भाषा में लिखित तन्त्र-ग्रन्थ उल्लेखनीय हैं। पाण्डुलिपियों में गुरुग्रन्थसाहेब और कुरानशरीफ का महत्वपूर्ण स्थान है।

**अस्त्र-शस्त्र कक्ष**

प्रागैतिहासिक काल में जब मानव को अपने अस्तित्व का बोध हुआ, उसी समय से उसने अपने जीवन की रक्षा के लिए अस्त्र-शस्त्र का प्रयोग प्रारम्भ किया। पाषाण काल में मानव के विविध हथियार और अन्य उपकरण पाषाण निर्मित थे। जैसे-जैसे मानव ने विकास किया, उसके अस्त्र-शस्त्र उन्नतिशील होते गए। ताम्रकाल में ताँबे के और जब लोहे का ज्ञान हुआ तो अस्त्र-शस्त्र लोहे के बनने लगे।

इस संग्रहालय में अस्त्र-शस्त्र का भी एक पृथक कक्ष है। इनमें धनुषबाण, तलवार, ढाल तथा कवच प्रमुख हैं। युद्ध में बजने वाली तुरही उल्लेखनीय है। इसके



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अतिरिक्त द्वितीय महायुद्ध के समय की कुछ बन्दूकें, मशीनगन आदि भी प्रदर्शित की गई हैं।

**श्रद्धानन्द बलिदान कक्ष**

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के संस्थापक स्वर्गीय श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी की स्मृति में यह कक्ष स्थापित किया गया है। यह कक्ष आर्यसमाज की एक बहुत बड़ी धरोहर है। इस प्रदर्शनी में पहुँचकर दर्शक आत्मविभोर हो उठते हैं। इसमें स्वामी जी के आरम्भिक जीवन काल से अन्तिम समय तक की झाँकी प्रस्तुत की गई है।

**विविध सामग्री कक्ष**

इस कक्ष में प्रदर्शित वस्तुओं में लाख कला के नमूने, नाथद्वारा तथा कांगड़ा शैली के चित्र, पं० नेहरू को उपहार में प्राप्त कुछ विदेशी खिलौने, उत्तराखण्ड के प्राकृतिक सौन्दर्य के चित्र विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

अन्त में छटी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत विभाग की उपलब्धि का उल्लेख महत्वपूर्ण है। पुरातत्व संग्रहालय के लिए पचास हजार रु० का विशेष अनुदान प्राप्त हुआ। संग्रहालय के कुशल संचालन के लिए क्यूरेटर और संग्रहालय सहायक के पद भी प्राप्त हुए। सहायक क्यूरेटर का पद विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने बहुत पहले ही सृजित कर दिया था। संग्रहालय को वर्तमान रूप प्रदान करने में संग्रहालय के कर्मचारियों का योगदान प्रशंसनीय रहा है।

संग्रहालय के विकास में विश्वविद्यालय के कुलपति, उपकुलपति, कुलसचिव और वित्तअधिकारी ने समय-समय पर जो रुचि ली, वह अत्यन्त ही उपयोगी और प्रेरणादायक रही है। वर्तमान कुलपति श्री आर० सी० शर्मा संग्रहालय के विकास के लिए व्यक्तिगत रूप से प्रयत्नशील हैं। हमें पूर्ण विश्वास है कि उनके कार्यकाल में यह संग्रहालय राष्ट्रीय स्तर प्राप्त करने में शीघ्र ही समर्थ होगा।

---



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

# भारतीय मृण-मूर्तियाँ एवं गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का मृणमूर्ति-संग्रह

डा० सूर्यकान्त श्रीवास्तव
संग्रहालयाध्यक्ष

कला की अनुभूति साधारण से साधारण व्यक्ति को होती है। अनुभूति की अभिव्यक्ति के लिए आवश्यक है माध्यम। अतः आसानी से उपलब्ध मिट्टी को सर्वसाधारण ने माध्यम के रूप में अपनाया। सुविधापूर्वक सुलभ मिट्टी के निर्मित खिलौनों (मृण मूर्तियाँ) को भारतीय कला में विशिष्ट स्थान प्राप्त हुआ। मृण-मूर्तियों का निर्माण मात्र अभिव्यक्ति ही नहीं वरन् धार्मिक एवं सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये भी किया गया। यही कारण है कि मृण-मूर्तियाँ जनसाधारण में अधिक लोकप्रिय कला है।

भारतीय उपमहाद्वीप में मृणमूर्तियाँ निर्माण की प्राचीनता का साक्ष्य बलूचिस्तान के मेहरगढ़ नामक स्थान से प्राप्त हुआ है। हाल में हुए उत्खनन में मेहरगढ़ के नव-पाषाण काल के स्तर से मानवीय एवं पशु मृणमूर्तियाँ प्राप्त हुयी हैं। कालक्रम के आधार पर इनकी प्राचीनता सातवीं सहस्राब्दी के पूर्वार्ध में मानी गयी है। समय के साथ में संस्कृतियों के परिवर्तनचक्र में कलाकार हर बार जन्मा और समाप्त हुआ लेकिन मृण-मूर्ति निर्माण कला किसी न किसी रूप में चलती रही। संस्कृतियों के परिवर्तन के साथ ही आधार एवं शैली में परिवर्तन हुआ जो मृण-मूर्तियों पर दृष्टिगोचर होता है। उदाहरणतया सिन्धु सभ्यताकालीन मातृदेवी की मृण-मूर्ति एवं पशु वृषभ मूर्ति, मौर्य एवं कुषाणकालीन मातृ-देवी एवं पशु मूर्तियाँ शैली में भिन्नता प्रस्तुत करती हैं। यही कारण है मृणमूर्तियाँ के निर्माणशैली विभिन्न संस्कृतियों के साथ जानी जाती हैं।

नवपाषाणकाल से सिन्धुसभ्यताकाल के मध्य निर्मित मृण-मूर्तियाँ विभिन्न सांस्कृतिक शैलियों में विभाजित की गयी हैं। यथा झोब से प्राप्त मातृदेवी की मृणमूर्ति, कुल्ली से प्राप्त मातृदेवी एवं चतुर्थ सहस्राब्दी के अन्तिम चरण या तृतीय सहस्राब्दी के प्रारम्भिक चरण में बनाई गयी मृण-मूर्तियों का उल्लेख विशेषरूप से किया जा सकता है। मृण-मूर्तियों के निर्माण की परम्परा का क्रम निवासा एवं ईनाम गांव से प्राप्त मृणमूर्तियों के रूप में चलता रहा।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

उत्तर भारत में सिन्धु सभ्यता के पश्चात काल में लालकिला जिला बुलन्दशहर से प्राप्त गेरुये रंग वाले मृद भाण्ड वाली संस्कृति से प्राप्त मानवीय मृण-मूर्ति हैं। तदुपरान्त चित्रित भूरे रंग वाले मृद भाण्ड वाली संस्कृति (Painted Grey Ware Culture) से प्राप्त जखेड़ा की मृण-मूर्तियों का उल्लेख आवश्यक है। उत्तरी कृष्णमार्जित मृद भाण्ड (Northern Black Polished Ware Culture) वाली संस्कृति के अयोध्या उत्खनन से प्राप्त हाथ से बनी नारी मूर्ति है जिस पर उत्तरी कृष्णमार्जित चमक की गयी है, अपना विशिष्ट स्थान रखती है।

उत्तर प्रदेश एवं बिहार के अनेक स्थानों से प्राप्त, हाथ से बनी मूर्तियाँ इस काल की उल्लेखनीय कृतियाँ हैं। इन मृणमूर्तियों का काल निश्चित नहीं है अत: इन्हें **Ageless Archaeo Terracotta** कहा जाता है। इनका निर्माण अनवरत ऐतिहासिक काल तक चलता रहा।

ऐतिहासिक काल का आरम्भ तृतीय शताब्दी ईसापूर्व ब्राह्मीलिपि के साथ माना गया है। मौर्यकाल में निर्मित मृणमूर्तियाँ मानवीय तथा पशु दोनों ही बनाई गई। मूर्ति को अलंकृत करना इस युग की विशेषता है। अलंकरण में छोटे-छोटे गोल तथा हल्के बिंदुओं से सज्जित मूर्तियाँ प्राप्त होती हैं। मानवीय मूर्तियों में नारी मृण - मूर्तियाँ बहुतायत से बनायी गयी। सम्भवत: धार्मिक अनुष्ठान के लिए मातृदेवी की मूर्तियों का निर्माण किया गया। इनके निर्माण के मुख्यस्थल मथुरा, कौशाम्बी, पाटिलीपुत्र एवं गंगाघाटी के अन्य स्थान हैं। एक काल एवं शैली में क्षेत्रीय विभिन्नता दृष्टिगोचर होती है। उदाहरणस्वरूप पाटिलीपुत्र में निर्मित मृणमूर्तियाँ आकर्षक, सुन्दर एवं देखने में कमनीय हैं। हाथ से बनी मूर्तियों में अलंकरण अधिकतर अलग से बनाकर लगाए गए हैं। लेकिन इनके चेहरे साँचे द्वारा निर्मित हैं।

शुंगकाल में मृण-मूर्ति कला को नवीन शैली प्राप्त हुई। इस शैली का विकास सम्भवत: मृण-मूर्तियों की लोकप्रियता का जनसामान्य में अपनाया जाना था। अभी तक मृणमूर्तियों के चेहरे ही सांचे में बनाये जाते थे। नयी तकनीक में एक ही साँचे से सम्पूर्ण प्रतिमा को बनाया जाता था। इससे आकृति के शरीरसौष्ठव प्रदर्शन में चपटापन अवश्य आया लेकिन एक ही प्रकार की कई मूर्तियाँ कम समय में जनसाधारण के लिए बनाना सुलभ हो गया। अलंकरण पूर्ववत किया जाता रहा, अलंकरण के लिए ठप्पे का उपयोग एवं पगड़ी की वेशभूषा में विभिन्नता भी दिखायी देती है। लाल मिट्टी एवं भूरे रंग दोनों ही प्रकार की मृण-मूर्तियाँ बनायी गयीं। शुंगकाल लगभग १०० वर्ष तक ही रहा लेकिन कला की दृष्टि से यह अत्याधिक समृद्ध कहा जा सकता है।

मृण फलक भी साँचे से इस युग में बनाए गए। भारतीय मृणमूर्ति कला में प्रथम बार दैनिक जीवन की विषयवस्तु, प्रतिमाविज्ञानशास्त्र पर आधारित एवं प्राचीन साहित्य



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

में वर्णित विषयों पर मृणफलक बनाए गए। इनके अतिरिक्त मिथुन युगल एवं प्रेमप्रसंगों को भी स्थान प्राप्त हुआ। प्रेम-प्रसंगों में विक्रम एवं उर्वशी, उदयन एवं वासवदत्ता तथा यक्ष एवं यक्षी का चित्राँकन सुन्दर ढंग से किया गया है। शुंगकालीन मृणमूर्तिकला के निर्माण के मुख्य स्थानों में मथुरा, पटना, कौशाम्बी, बक्सर, तामलुक तथा चन्द्रकेतुगढ़ मुख्य हैं।

ईसा के प्रारम्भिक काल में शक-कुषाण राजाओं के समय में मृणमूर्तिकला का ह्रास हुआ। कुषाणकाल में मृणमूर्तियों के निर्माण में खोखले शरीर की प्रतिमाएँ बनाई गईं। सिर का भाग अलग से बनाकर मुख्य शरीर से बेलनाकार मिट्टी के बने भाग से जोड़ दिया जाता था। मूर्तियाँ बड़ी भारी आकार की बनाई गयीं। मौर्य एवं शुंगकालीन अलंकरण का स्थान अलग से चिपकाई मिट्टी के हार तथा कमरबन्द ने ले लिया जिस पर ठप्पे या लकड़ी से गहरी लाइने बनाकर सजाया जाता था। नग्नता का भी चित्रण किया गया। विभिन्न प्रकार की नारीमूर्तियाँ बनाई गयीं जिसमें 'हारंती' तथा माँ-बच्चे की मृण-मूर्तियाँ उल्लेखनीय हैं। यक्षपरम्परा से प्रभावित शैली में लक्ष्मी, कुबेर, शिव आदि की मूर्तियाँ बनाई गयीं। प्रस्तरप्रतिमाओं का निर्माण इसी काल में प्रारम्भ हुआ जिसका प्रभाव मृणमूर्तिकला पर स्वाभाविक रूप से लक्षित है।

दक्षिणशैली में इस काल में मृणप्रतिमाएँ कुछ छोटी बनाई गयीं। काओलिन का प्रयोग भी मृणमूर्तियों के निर्माण में किया गया।

गुप्तकाल में मृणमूर्तिकला अन्य कलाओं की तुलना में चरमोत्कर्ष पर थी। मौर्य-शुंगकालीन अलंकरण नयी शैली में विकसित हुआ। अर्धमीलित नेत्र, तीखे नक्श का चित्रण, ऊपरी सौन्दर्यबोध के प्रदर्शन ही नहीं बल्कि आन्तरिक मानसिक अनुभूतियों का प्रस्तुतीकरण अपने आप एक विशिष्टता प्रकट करता है। केशसज्जा में विभिन्नता इस काल की प्रमुख देन में से एक है, विशेषरूप से त्रिभागीय केशसज्जा गुप्तकाल की विशेषता है। देवी-देवता, मिथुन युगल, दैनिक जीवन के उपयोग की विशेषता एवं सामाजिक विषयों को भी मृण-फलक का विषय चुना गया। विभिन्न धायमूर्तियों का प्रस्तुतीकरण इसका विशेष उल्लेखनीय उदाहरण है।

गुप्तकाल में प्रायः सभी कलाओं को मान मिला। प्रस्तर पर मूर्तियों के निर्माण के साथ-साथ मृणमूर्तियों का निर्माण स्पष्टतया कलाविधाओं में मृणमूर्तियों के विशिष्ट स्थान एवं लोकप्रियता के द्योतक हैं। अहिच्छत्रा से मानवीय लम्बाई की गंगा-यमुना की मूर्तियाँ दुर्लभ कलाकृतियाँ हैं।

सम्पूर्ण भारतवर्ष में क्षेत्रीय विभिन्नता के साथ-साथ गुप्तशैली के विभिन्न केन्द्र विकसित हुए, यथा—हरकन एवं अखनूर काश्मीर में, रंगमहल एवं नगरी राजस्थान में,



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पवाया मध्यप्रदेश में, सेहत-मेहत कसिया राजघाट, अहिच्छत्रा-कौशाम्बी-मथुरा उत्तर प्रदेश में, देवानमोरी गुजरात में, वसराह एवं पटना बिहार में एवं बाणगढ़ पश्चिम बंगाल में।

मृण-मूर्तियाँ एवं मृणफलक के साथ ही गुप्त की ईंटों के सज्जित मन्दिर जिनमें विभिन्न प्रकार की चित्रकारी, मिथुन युगल एवं पौराणिक साहित्य पर आधारित दृश्यों को दर्शाने वाले मृण-फलक लगाए गए । अहिच्छत्रा, भीतरगांव, सिरपुर एवं अपहसद्र विशिष्ट रूप से उल्लेखनीय हैं।

मृण-फलक एवं ईंटों द्वारा मन्दिर बनाए जाने की परम्परा पूर्वी भारत में पाल एवं सेन राजाओं के काल तक चलती रही। बुद्ध एवं बौधिसत्व से सम्बन्धित भिन्न कथाओं के दृश्य दिखाये गये हैं। नालन्दा, गया, विक्रमशिला एवं पहाड़पुर (बंगलादेश) का नाम विशेषरूप से उल्लेखनीय है। प्राप्त साक्ष्य के अनुसार यह आठवीं-दशवीं शताब्दी तक प्रचलित रही ।

उत्तर भारत में मुस्लिम शासकों के आगमन के कारण इस कला में उल्लेखित ह्रास हुआ। १७वीं - १९वीं शताब्दी में पुनः बंगाल में इस कला का प्रारम्भ एवं विकास हुआ।

मध्यकाल से वर्तमान तक मृण-मूर्तियाँ जनसामान्य में लोकप्रिय रहीं। विशेषरूप से धार्मिक आवश्यकता एवं बच्चों के खिलौनों के रूप में।

समय एवं क्षेत्रीय विभिन्नता का प्रभाव निरन्तर बना रहा फलतः मध्यकाल, सुलतान काल, मुगलकाल एवं कम्पनी सरकार का काल स्पष्टतया निर्धारित किया जा सकता है ।

---

गुरुकुल कांगड़ी संग्रहालय के विभिन्न संग्रहों में मृण-मूर्तियों का संग्रह विशेषरूप से उल्लेखनीय है। विभिन्न स्थानों से प्राप्त मृण-मूर्तियों की संख्या लगभग ५०० है। स्थानिक महत्ता के आधार पर यह संकलन मथुरा-कौशाम्बी एवं विदिशा से प्राप्त मृण-मूर्तियों का है । अगनई खेड़ा, शाहबाद, आवला बरेली, एवं इमलीखेड़ा व सरसावा सहारनपुर से भी कुछ मूर्तियों को संगृहीत किया गया है।

अधिकतर मृणमूर्तियाँ क्रय की गयी हैं। विदिशा से प्राप्त मृणमूर्तियाँ प्रो० कृष्णदत्त बाजपेयी के सौजन्य से उपलब्ध हुयी हैं। स्तरीय कालक्रम के अभाव में शैली के आधार पर ही इनका विभाजन किया गया है।

संग्रहालय में मौर्यकालीन भूरे रंग की लगभग २५ मानवीय एवं कुछ पशु मूर्तियाँ



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हैं। कुछ मूर्तियाँ प्राग्मौर्यकालीन कही जा सकती हैं। अधिकतर मूर्तियों के निर्माण में साँचे का उपयोग मुखभाग बनाने में किया गया है।

—मात्र हाथ से बनी तीन मूर्तियाँ हैं। मुखभाग में मिट्टी में ही उठाकर नाक एवं दबे हिस्से में आँख बनायी गयी है। कानों में भारी कुण्डल एवं गले में हार अलग से चिपकाया गया है। छोटे-छोटे बिन्दुओं से मूर्ति को सजाया गया है। मृणमूर्ति का कमर से नीचे का भाग टूटा हुआ है। भारी उभरा वक्ष:स्थल समय का प्रभाव दर्शाता है। द्वितीय मृणमूर्ति का ऊपर का भाग टूटा हुआ है, कमर से नीचे के भाग में फैला हुआ वस्त्र एवं उस पर की गयी अलग से चिपकाई सज्जित पट्टियों से राज-शाही पोशाक का आभास दिलाती है।

इस काल की द्वितीय वर्ग की मृणमूर्तियों में मुखभाग साँचे द्वारा बनाया गया है। मुखभाग को हाथ से बने शरीर से चिपकाया जाता है। अलग से मिट्टी की पट्टियों से सजाया गया है। केशविन्यास के ठप्पे द्वारा बने फूल, भारी कुण्डल, गले का हार, बाजूबन्द एवं कमर में मेखला बनाई गयी है। इनको छोटे-छोटे बिन्दुओं या गोल अथवा ठप्पे से सज्जित किया गया है।

पशुआकृति में हाथी, घोड़ा एवं कुत्ता है। भूरे रंग की पशु मृणमूर्तियों में विशेषत: हाथी छोटे बिन्दुओं एवं ठप्पे से सजाया गया है। अश्व एवं कुत्ता आँखों की दर्शाने की कला पर ही इस वर्ग का माना गया है।

—शुंगकालीन परम्परा में साँचे से बने मृणफलक हैं जिनमें मौर्यकालीन फूलों की सज्जा केशविन्यास के साथ एवं भारी अलंकरण दर्शाये गये हैं। विविध युगलमिथुन संग्रहालय वीथिका में प्रदर्शित हैं।

—विशेषरूप से उल्लेखनीय है एक गाड़ी का भाग जिसमें दोनों ओर दो-दो पुरुष बैठे हैं जिनके मध्य में घट एवं खाने योग्य वस्तुयें रखी हैं। यह मृणमूर्ति साँचे से बनी है तथा तत्कालीन आवागमन व्यवस्था को दर्शाती है।

कुषाणकालीन मृणमूर्तियों में अधिकतर सिर के भाग हैं जिनमें बेलनाकार मिट्टी का शंकु लगा है जिससे उन्हें मुख्य खोखले शरीर से लगाया जाता था। खोखले, अनगढ़, भारी एवं कुछ बड़े आकार की मृणमूर्तियाँ इस काल की देन हैं। अलग से चिपकाई हुयी पट्टियों द्वारा हार, मेखला एवं अलंकरण बनाये गए जिन पर ठप्पे से फूल के चित्र बने हैं। नग्नता को भी दर्शाया गया है। सज्जा के लिये ठप्पे का उपयोग इसी काल की देन है। संग्रहालय के संकलन में कुषाणकालीन मूर्तियों में पैरों पर बैठी हुयी लक्ष्मी की मूर्ति है। दोनों हाथ में पुष्प हैं। इस मुद्रा में पत्थर पर भी मूर्ति उत्कीर्ण की गयी हैं। कुबेर की प्रतिमा भी यक्षपरम्परा की उत्कृष्ट कृति है।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अन्य विशिष्ट कृति है 'हारंती' की मूर्ति जो सम्भवतः धार्मिक एवं रोगनिदान की देवी के रूप में पूजी जाती थी। इसके कई रूप मिलते हैं। संग्रहालय के संग्रह में जो मूर्ति है वह सीधे बैठी है, बायीं ओर गोद में बच्चा है एवं दायें हाथ में प्याला।

गुप्तकालीन मृणमूर्तियों का अच्छा संकलन संग्रहालय में है जिनमें त्रिभागीय विभिन्न केशसज्जा दर्शनीय है। कुछ मूर्तियाँ त्रिभागीय मुद्रा में साँचे से बनाई गयी हैं।

स्त्री की मृणमूर्ति जो एक वृत्त में बनी है, वृत्त का चित्रित भाग ईंट का खण्ड है। सुन्दर केशपाश, नुकीली नाक, आधी खुली आँखें, उभरी ढोड़ी, एक सुन्दर मुख को प्रस्तुत करती है। वृत्त के आस-पास का भाग भी फूल-पत्तियों की चित्रकारी से सज्जित है। लाल रंग की यह मृणमूर्ति कौशाम्बी के सर्वेक्षण से प्राप्त हुयी है। प्रस्तुतीकरण अन्य क्षेत्रीय स्थानों के समरूप है।

द्वितीय मूर्ति युगलमिथुन की है। सिर का भाग टूटा हुआ है। साँचे से निर्मित इस फलक में पुरुष बैठा हुआ है, उसके बायीं ओर नारी जंघा से सटी बैठी है। शारीरिक मुद्रा से एकाकार होने की आन्तरिक इच्छाभाव एवं लोकलज्जा की झिझक स्वतः इसमें प्रतीत होती है। संग्रहालय की यह एक दुर्लभ कृति है।

मध्यकाल की मूर्तियों में गुप्तकला का प्रभाव लक्षित होता है लेकिन समाप्त-प्रायः स्थिति में। शरीरसौष्ठव एवं अलंकरण में काफी परिवर्तन दिखायी देता है।

—बन्दर की विभिन्न प्रकार की मूर्तियाँ, तीन टांगों पर बैठी मानवीय मूर्ति एवं बैल जोड़ी तथा पशु इस काल में बनाये गये।

—कुछ मृणमूर्तियों के चेहरों पर पश्चिमी प्रभाव एवं वेशभूषा पर कम्पनीकाल का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है।

—भारतीय मृणमूर्तिकला के लगभग सभी क्षेत्रों एवं कालों की मूर्तियों का संकलन संग्रहालय में है। मृणमूर्तियों के उचित प्रदर्शन हेतु संग्रहालय के केन्द्रीय कक्ष में मृणमूर्तियाँ प्रदर्श की गयी हैं। आवश्यकता इनके विषद् अध्ययन की है। अगर उचित सुविधा मिले तो मृणमूर्ति पर अध्ययन अवश्य किया जाना चाहिए।

————



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

# गुरुकुल संग्रहालय में सुरक्षित पाषाणप्रतिमाएँ

—सुखबीरसिंह
सहायक क्यूरेटर, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय संग्रहालय

भौगोलिक दृष्टि से यह संग्रहालय सहारनपुर जनपद के ऐसे स्थान में स्थित है जिसे हरिद्वार की पवित्र भूमि कहा जाता है। यों तो उत्तर प्रदेश में अनेक संग्रहालय हैं और उनमें से अनेक इस संग्रहालय से अधिक सम्पन्न और आकर्षक भी हैं, किन्तु इस संग्रहालय की एक अपनी विशेषता है। वह यह कि यह उत्तराखण्ड की प्राचीन साँस्कृतिक थाती का रक्षक होने के कारण आज एक महत्वपूर्ण संग्रहालय बना हुआ है। सांस्कृतिक चेतना की दृष्टि से यह क्षेत्र इतना सम्पन्न है जहाँ पुरातन युग से ही गंगा की धारा प्रवाहित हो रही है। यहाँ गंगा की घाटी में एक भव्य प्राचीन संस्कृति पनप रही थी, जिसके चिन्ह इस संग्रहालय में संग्रहीत पुरातात्विक सामग्री से स्पष्ट होते हैं।

गुरुकुल के उपवन का यह ज्ञानतरु संग्रहालय पूर्णरूपेण पुष्पित है। यह अन्य पुरातात्विक सामग्री की भाँति पाषाणप्रतिमाओं के सन्दर्भ में भी अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इस कला का भी विशेष महत्व इस बात में है कि वह मनोमय जगत और भूतमय जगत के मध्य एक सेतु है। इस पुल पर चढ़कर हम जान सकते हैं कि मनुष्य ने राष्ट्रीय संस्कृति के निर्माण में एक ओर कितना सोचा था और दूसरी ओर कितना निर्माण किया था। कला किसी विचारकल्पना को दृश्यरूप देती है। कला का यही रहस्य है कि उसमें लोक की सांस्कृतिक परम्परा की व्याख्या होती है।

इस संग्रहालय में सुरक्षित पाषाण प्रतिमायें भी अन्य पुरातात्विक सामग्री की भाँति ही क्रय द्वारा, उपहारस्वरूप और पुरातात्विक सर्वेक्षण द्वारा संग्रहीत की गयी हैं। आजकल इस वीथिका में ३४४ प्रतिमायें संग्रहीत हैं। इन प्रतिमाओं में प्रथम शती ई० से आधुनिक काल तक की पाषाणप्रतिमायें हैं, लेकिन इनमें प्रमुखरूप से प्रथम शती ई० (कुषाणकाल) से १०वीं शती ई० तक की कलाकृतियों का बड़ा ही अनूठा संग्रह विद्यमान है। ये प्रतिमायें हिन्दू, बौद्ध तथा जैन प्रतिमायें हैं। इनका संग्रह मथुरा, शाहबाद (जिला हरदोई), कन्नौज, कांगड़ी ग्राम, आम्रस्रोत, लालढांग (बिजनौर), पाण्डुस्रोत (गढ़वाल), झीवरहेड़ी, सुलतानपुर (सहारनपुर) तथा हरिद्वार के समीपवर्ती क्षेत्रों से किया गया है।

इन स्थानों से संग्रहीत प्रतिमाओं में मथुरा कला की ३८ प्रतिमायें क्रय की गयी हैं। ये उन दुकानदारों से क्रय की गयी हैं जो प्राचीन कलाकृतियों का संग्रह रखते हैं। ये



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रतिमायें कुषाणकाल से १०वीं शती ई० तक की हैं। इनमें अधिकतर कुषाणकालीन हैं। लाल चित्तिदार पत्थर पर उत्कीर्ण की गयी ये प्रतिमायें सौन्दर्यप्रदर्शन के अतिरिक्त भावभंगिमा तथा शिल्पकारिता की दृष्टि से उत्कृष्ट कला की परिचायक हैं। इन प्रतिमाओं में बुद्ध प्रतिमा (सं० १३२३), अभयमुद्रा में बुद्ध (१२८६), बुद्ध का महापरिनिर्वाण (१७७), एकमुखी शिवलिंग (१२८३), पद्महस्ता लक्ष्मी (१२८७), सप्तमातृकायें (३७२१), महिषासुरमर्दिनी (१२९१), कुबेर (४११) और शुक क्रीड़ारत नारी (१३१७) आदि प्रतिमायें विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं।

इस संग्रहालय में उपरोक्त प्रतिमाओं के अतिरिक्त मथुरा कला की गुप्तकालीन पाषाणकलाकृतियाँ भी संग्रहीत हैं। ये प्रतिमायें कलासौष्ठव की दृष्टि से महत्वपूर्ण कलाकृतियाँ हैं। इस काल को भारतीय इतिहास में स्वर्णिम काल कहा जाता है और कला की दृष्टि से भी इस तथ्य की सत्यता सिद्ध होती है। पुनर्जागरण के इस युग में शिल्पी ने बाह्यसौन्दर्य के साथ आन्तरिक भावनाओं के प्रदर्शन पर अधिक बल दिया। इस काल की प्रतिमाओं में बुद्ध का शिरोभाग (१२८६), बोधिसत्व का शिरोभाग (१४५७) और देवप्रतिमा (३७२३) आदि सुन्दर कलाकृतियों में विशेष स्थान रखती हैं। इस काल की सारनाथ कला में बुद्ध प्रतिमा (११२) भी महत्वपूर्ण कलाकृति है।

यहाँ ७वीं शती ई० से १०वीं शती ई० तक की मथुरा कलाकृतियों में बुद्ध प्रतिमा (१३११), विष्णु (१३१२), शेषशायी विष्णु (१२९३), आलिंगनमुद्रा में शिव-पार्वती (१२९०) और दुर्गाप्रतिमा (४०८) भी पूर्वमध्यकालीन कलाकृतियों में विशेष स्थान रखती है। इस काल की कन्नौज से प्राप्त प्रतिमाओं में धर्मचक्र प्रवर्तन मुद्रा में पद्मासन बुद्ध (१४७), विष्णु (१२५) और हरिहर का शिरोभाग (१३०८) भी पाल-कालीन कला की महत्वपूर्ण कलाकृतियाँ हैं। यहाँ से प्राप्त पालकला की इन कृतियों में हम गुप्तकालीन शालीनता और गतिशीलता का अनुभव करते हैं। चेहरे की बनावट, केश-विन्यास, होठों की रचना और उन पर अधखिली साधारण मुस्कान तथा अल्प-आभूषणों के चित्रण, गुप्तकला की प्रत्यक्ष सीध में हैं।

इन प्रतिमाओं के अतिरिक्त पाण्डुस्रोत, लालढांग, झींवरहेड़ी, सुलतानपुर, कांगड़ी ग्राम, आमस्रोत तथा हरिद्वार क्षेत्र के समीपवर्ती क्षेत्रों से समय-समय पर किए गए पुरातात्विक सर्वेक्षण द्वारा अन्य पुरातात्विक सामग्री की भाँति पाषाण प्रतिमाएँ भी संग्रहीत की गयी हैं। ये प्रतिमाएँ जहाँ उत्तराखण्ड का इतिहास बताती हैं, वहाँ यह भी प्रतिपादित करती हैं कि इस क्षेत्र में विभिन्न कालों में बसने वाले लोगों के रीति-रिवाज क्या थे और उनके धर्म, विश्वास तथा विचार किस प्रकार के थे ? इन प्रतिमाओं से ज्ञात होता है कि किसी समय यहाँ बौद्धों का भी प्रभाव था। यहाँ जैनियों, शैवों तथा हिन्दुओं की प्रतिमाओं का भी अच्छा संग्रह है। इस संग्रह में ८वीं शती ई० से १०वीं शती ई० तक की प्रतिमाएँ कला के क्षेत्र में अपना विशेष महत्व रखती हैं।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

इस काल की गंगा नदी के पूर्वी तट अर्थात् बाएँ किनारे पर हरिद्वार नगर से लगभग ८–१० किलोमीटर दूर कांगड़ी ग्राम से प्राप्त ललितासनस्थ अग्निदेव (१४६६) जिसके सिर के दोनों ओर से अग्निज्वालाएँ निकल रही हैं, सिंहारूढ़ दुर्गा (१४७०), आसवपाई कुबेर (१४७४), सप्तमातृका (१३२०) और पद्मपाणि शिव (१३२१) आदि प्रतिमाएँ सुन्दर कलाकृतियाँ हैं और कला के क्षेत्र में अपना स्वतन्त्र अस्तित्व रखती हैं।

कांगड़ी ग्राम तथा आम्रस्रोत से पाँच जैन प्रतिमाएँ भी प्राप्त हुई हैं, जिनसे यह आभास ही नहीं, अपितु स्पष्टरूपेण ज्ञात होता है कि कभी यह क्षेत्र जैन धर्म का केन्द्र रहा होगा। इन प्रतिमाओं में सर्वतोभद्रिका प्रतिमा (१६४२), शीर्षहीन महावीर (१३१९), और जैन तीर्थंकर (१३१६) की प्रतिमायें भी हरिद्वार क्षेत्र की महत्वपूर्ण कलाकृतियाँ हैं। इन प्रतिमाओं में सभी तीर्थंकर पद्मासन में दर्शाए गए हैं।

सुलतानपुर के पूर्व में गंगा के किनारे प्राचीन टीलों की श्रृंखला है, जहाँ से चुतुर्मुखी विद्याधर या दिग्पाल (३८०७) और विष्णुलक्ष्मी प्रतिमा (३८०८) भी इस क्षेत्र की सुन्दर कलाकृतियाँ हैं। यहाँ से निकट ही झींवरहेड़ी ग्राम से प्राप्त समुद्रमंथन का पाषाणफलक (३१८०) भी हरिद्वार क्षेत्र की महत्वपूर्ण उपलब्धि है। यह फलक तो लन्दन में हुए भारतउत्सव–वर्ष १९८२ में प्रदर्शित किया गया। गुरुकुल के लिए यह बड़े गौरव का विषय रहा।

हरिद्वार और इसके समीपवर्ती स्थलों में श्रवणनाथ मठ, मायापुर और सतीकुण्ड आदि स्थानों से भी अनेक प्रतिमाएँ संग्रहीत की गई हैं। इन प्रतिमाओं में बुद्ध प्रतिमा (१६५), कुबेर (१६९), शिव-पार्वती (१७१) और महिषासुरमर्दिनी (३१८१) आदि प्रतिमाएँ भी इस क्षेत्र की महत्वपूर्ण कलाकृतियाँ हैं। इन प्रतिमाओं को देखने से ज्ञात होता है कि यहाँ के कलाकार न केवल अंग-प्रत्यंगों के सुचारु प्रदर्शन में सिद्धहस्त थे, अपितु वे पृष्ठभूमिसंयोजन, अलंकरण तथा भावाभिव्यक्ति के भी मर्मज्ञ थे।

अन्त में कहा जा सकता है कि हरिद्वार क्षेत्र से प्राप्त ८वीं शती ई० से १०वीं शती ई० तक की पाषाणप्रतिमाओं पर प्रतिहारकालीन कला का प्रभाव है। प्रतिहार युग में यहाँ परमपावन गंगा की उपत्यका में कतिपय देवभवनों का, प्राचीन भारतीय स्थापत्य एवं शिल्प में अथवा स्वतन्त्र अस्तित्व रहा होगा।

---



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

# पुरातत्व संग्रहालय में श्रद्धानन्द वीथिका

—डा० जबरसिंह सेंगर
निदेशक, पुरातत्त्व संग्रहालय

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के जीवन-काल से सम्बन्धित सामग्री इस विशाल कक्ष में प्रदर्शित की गई है। इससे पूर्व कि यहाँ की सामग्री पर कुछ लिखा जाए; उचित होगा कि स्वामी जी के जीवनवृत्त पर कुछ प्रकाश डाला जाए।

स्वामी जी के परदादा श्री सुखानन्द जी तथा पिता श्री नानकचन्द जी थे। स्वामी जी का जन्म सम्वत् १९१३ की फाल्गुन-वदी त्रयोदशी को ग्राम तलवन जिला जालंधर में हुआ था। इनका प्रारम्भिक नाम मुंशीराम था। पढ़ने-लिखने में आप बहुत प्रवीण थे। क्वीन्स कालेज के स्कूल से आपने हाईस्कूल (एन्ट्रेंस) की परीक्षा पास की। परीक्षा जब समाप्त हुई तो उसी समय इनकी माता का देहान्त हो गया था। १८७७ में इनका विवाह जालन्धर के प्रसिद्ध रईस ला० शालिग्राम की सुपुत्री शिबदेवी के साथ हुआ। १८८० में मुंशीराम जी नायब तहसीलदार नियुक्त हुए। १८८३ में आपने नायब तहसीलदार के पद से त्यागपत्र दे दिया तथा फिल्लौर में वकालत करने लगे और फिर जालन्धर आ गए।

मुंशीराम जी पर लाला देवराज का प्रभाव पड़ा। अतः १८८५ में उन्होंने आर्य समाज में प्रवेश किया। महात्मा मुंशीराम पर पं० गुरुदत्त जी विद्यार्थी का विशेष प्रभाव था। श्री दुर्गाप्रसाद, श्री आत्माराम, श्री रामभज चौधरी तथा महात्मा मुंशीराम ने महसूस किया कि डी०ए०वी० कालेज वैदिक शिक्षाप्रणाली से दूर होते जा रहे हैं। अतः मुंशीराम जी ने १८९७ में 'आर्य पत्रिका' में एक लेख प्रकाशित कर १८९८ के नवम्बर मास में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब में गुरुकुल स्थापित करने का प्रस्ताव पारित कराया। मुंशीराम जी के निकटस्थ मित्र लाला रालाराम तथा राय ठाकुरदत्त लाहौर के पास गुरुकुल खोलना चाहते थे, पर महात्मा जी प्रकृति से ओतप्रोत स्थान पर गुरुकुल स्थापित करना चाहते थे। १९०१ में पुण्यभूमि, गुरुकुल कांगड़ी में गुरुकुल खोलने की अनुमति आर्य प्रतिनिधि सभा ने दे दी तथा ४ मार्च १९०२ को गुरुकुल प्रारम्भ हो गया जिसमें २० ब्रह्मचारी (स्वामी जी के २ पुत्र भी) प्रविष्ट हुए तथा पं० गंगादत्त जी आचार्य नियुक्त हुए। १९२४ में गंगा की बाढ़ के कारण यह गुरुकुल हरिद्वार के निकट गुरुकूल कांगड़ी में अब भी अपने वैभव को बढ़ा रहा है।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

महात्मा मुंशीराम जी १९१७ में संन्यास लेकर स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती बन गए। स्वामी जी ने निडर एवं त्याग की भावना से स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लिया। १९१९ में अमृतसर के कांग्रेस अधिवेशन की स्वागत-समिति के सभापति बने तथा उसे सफलतापूर्वक सम्पन्न कराया। इस समय स्वामी जी की हार्दिक इच्छा थी कि गुरुकुल का कार्यभार अन्य को सौंप दिया जाए। स्वतन्त्रता संग्राम को सफल बनाने के साथ-साथ स्वामी जी हिन्दी प्रचार, दलितोद्धार, शुद्धि-सभाएँ, राष्ट्रीय एकता, हिन्दू संगठन, आदि कार्यों में लगे रहे। स्वामी जी के इन पवित्र और अविस्मरणीय कार्यों से सम्बन्धित उनके जीवनकाल की सामग्री को इस संग्रहालय में संजोकर रखा गया है। इसकी सम्पूर्ण सामग्री हम धनाभाव के कारण तो प्राप्त नहीं कर पाए, पर जो प्राप्त है वह प्रदर्शित की गई है।

स्वामी जी ने शुद्धिप्रचार एवं एकता का संदेश दिल्ली की जामा मस्जिद में भी दिया, उसका एक तैलचित्र प्रदर्शित है। इसी प्रकार स्वामी जी की विभिन्न मुद्राएँ---लेटे हुए, बैठे हुए प्रदर्शित हैं। महत्वपूर्ण चित्र १९१९ का अमृतसर कांग्रेस अधिवेशन का है जिसमें स्वामी जी स्वागत समिति के अध्यक्ष थे। उनके साथ श्री गोखले, श्री मालवीय जी, श्री मोतीलाल नेहरू, पं० जवाहरलाल नेहरू, मौलाना अब्दुल कलाम आजाद आदि पूज्य महापुरुष विराजमान हैं। स्वामी जी को जब गोली लगी तो मृत्यु-उपरांत उनकी शवयात्रा में अपार भीड़ थी, उसे प्रदर्शित किया गया है। सम्भवतः इतना जनसमूह कभी किसी शवयात्रा में नहीं देखा गया जिसमें सभी जाति के लोग थे। अगला चित्र स्वामी जी के दाहसंस्कार का है जो सारे वातावरण को शांत, मौन एवं अवाक् बनाए हुए है। इसके बाद स्वामी जी के साथ लार्ड चेम्सफोर्ड के वे चित्र प्रदर्शित हैं जब उन्होंने गुरुकुल का भ्रमण किया था। स्वामी जी के वस्त्र, खडाऊँ, चादर, झोला, कम्बल, कुर्ता, लंगोटी, टोपा आदि उनके मूलरूप में प्रदर्शित हैं जो उनकी सादगी को प्रदर्शित करते हैं। स्वामी जी को ब्रह्मदेश की कुछ कलाकृतियाँ भेंटस्वरूप प्राप्त हुई थीं—वह प्रदर्शित हैं। इसी में एक सुभाषचन्द्र बोस की मूर्ति भी अपनी स्वतन्त्रतासंग्राम के सेनानी वेष-भूषा में शोभायमान है।

स्वामी जी से सम्बन्धित अनेक पत्रों में से कुछ पत्रों की फोटोप्रतियाँ भी प्रदर्शित हैं, जिनमें प्रमुख निम्न प्रकार हैं –

**गांधी संग्रहालय,**
**साबरमती।**

श्रद्धानन्द जी,

भाई साहब,

आपका पत्र मिला। जानबूझ के जलियाँवाला बाग के लिए मैंने कुछ नहीं लिखा है। मेरा अभिप्राय मैंने जेल में से निकलने के बाद भेज दिया था कि आज हमारे कुछ भी मकान नहीं बनने चाहिए। हिन्दू मुसलमान इत्यादि धर्मियों के ऐक्य का ही मकान



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

स्मरण चिह्न होगा। आज अगर हम कुछ भी बनाएँ तो वह झगड़े का एक और कारण बन सकता है। पैसा सुरक्षित है, ऐसा मेरा ख्याल है। आजकल की हमारी गन्दी आबोहवा में इतने से ही सन्तुष्ट रहना मुझको विशेष योग्य लगता है। आप अपना अभिप्राय मुझको भेज दें। आप ऐसा क्यों कहते हैं कि इसमें केवल मालवीय जी, मोतीलाल जी और मेरी ही जिम्मेदारी है? आप इस तरह से छूट नहीं सकते हैं। कम से कम जितनी हम तीनों की इतनी तो आपकी है ही है। आपका स्वास्थ्य अच्छा होगा।

ह०

**( मोहनदास कर्मचन्द गाँधी )**

---

**हिन्दी नवजीवन**

**गुरुवार, पौष बदि ४. सम्वत् १९८३** **२३ दिसम्बर, १९२६**

## शहीद श्रद्धानन्द

जिसकी उम्मीद थी वह हो गुजरा। कोई ९ महीने हुए स्वामी श्रद्धानन्द जी सत्याग्रहाश्रम में आकर दो-एक दिन ठहरे थे। बात-चीत में उन्होंने मुझसे कहा था कि उनके पास जब-तब ऐसे पत्र आया करते थे जिनमें उन्हें मार डालने की धमकी दी जाती थी। किस सुधारक के सिर पर बोली नही बोली गयी है? इसलिए उनके ऐसे पत्र पाने में अचम्भे की कोई बात नहीं थी। उनका मारा जाना कोई अनोखी बात नहीं है।

स्वामी जी सुधारक थे। वह कर्मवीर थे। जिसमें उनका विश्वास था, उसका वह पालन करते थे। उन विश्वासों के लिए उन्हें कष्ट झेलने पड़े। वह वीरता के औतार थे। भय के सामने उन्होंने कभी सिर नहीं झुकाया। वह योद्धा थे और योद्धा रोगशैया पर मरना नहीं चाहता। वह तो युद्धभूमि का मरण चाहता है।

कोई एक महीना हुआ कि स्वामी श्रद्धानन्द जी बहुत बीमार पड़े। डाक्टर अन्सारी उनकी चिकित्सा करते थे। जितने अनुराग से उनसे सम्भव था, डाक्टर अंसारी उनकी सेवा करते थे। इस महीने के शुरु में पूछने पर उनके पुत्र प्रो० इन्द्र ने तार दिया था कि स्वामी जी अब अच्छे हैं और मेरा प्रेम और दुआ माँगते हैं। मैं उनके बिना माँगे ही उन पर प्रेम और उनके लिए भगवान से प्रार्थना करता ही रहता हूँ।

भगवान को उन्हें शहीदों की मौत देनी थी। इसलिए जब अभी वे बीमार ही थे तभी हत्यारे के हाथ मारे गए, जो इस्लाम पर धार्मिक चर्चा के नाम पर उनसे मिलना चाहता था, जो स्वामी जी की प्रेरणा से आने दिया गया। जिसने प्यास मिटाने को पानी माँगने के बहाने स्वामी जी के ईमानदार नौकर धर्मसिंह को पानी लेने को बाहर हटा दिया, और जिसने नौकर की गैरहाजिरी में बिस्तर पर पड़े हुए रोगी की छाती में



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दो प्राणघातक चोटें कीं। स्वामी जी के अन्तिम शब्दों की हमें खबर नहीं। मगर अगर मैं उन्हें कुछ भी पहचानता था तो मुझे बिल्कुल सन्देह नहीं है कि उन्होंने अपने परमात्मा से उसके लिए क्षमायाचना की होगी जो यह नहीं जानता था कि वह पाप कर रहा है। इसलिये गीता की भाषा में वह योद्धा धन्य है जिसे ऐसी मृत्यु प्राप्त होती है।

मृत्यु तो हमेशा ही धन्य होती है मगर उस योद्धा के लिए तो और भी अधिक जो अपने धर्म के लिए यानी सत्य के लिए मरता है। मृत्यु कोई शैतान नहीं है। वह तो सबसे बड़ी मित्र है। वह हमें कष्टों से मुक्ति देती है। हमारी इच्छा के विरुद्ध भी हमें छुटकारा दे देती है। हमें बराबर ही नई उम्मीदें नए रूप देती हैं। वह नींद के समान मीठी है किन्तु तो भी किसी मित्र के मरने पर शोक करने की चाल है। अगर कोई शहीद मरता है तो यह रिवाज नहीं रहता। अतएव इस मृत्यु पर मैं शोक नहीं कर सकता। स्वामी जी और उनके सम्बन्धी ईर्ष्या के पात्र हैं। क्योंकि श्रद्धानन्द जी मर जाने के बाद भी अभी जीते हैं। उससे भी अधिक सच्चे रूप में जीते हैं जब वे हमारे बीच अपने विशाल शरीर को लेकर घूमा करते थे। ऐसी महिमामय मृत्यु पर जिस कुल में उनका जन्म हुआ था, जिस जाति के वे थे, वह सभी धन्यता के पात्र हैं। वे वीर पुरुष थे, उन्होंने वीरगति पाई।

मगर इस दृश्य का एक दूसरा पट भी है। मैं अपने को मुसलमानों का मित्र समझता हूँ। वे मेरे सहोदर भाई हैं। उनकी भूलें मेरी भूलें हैं। उनके सुख से मैं सुखी और दुःख से दुःखी होता हूँ। किसी मुसलमान के पाप से मुझे उतना ही दुःख होता है जितना कि उसे कोई हिन्दू करता। एक मुसलमान ने यह घोर कृत्य किया है। मुसलमानों के मित्र की हैसियत से मुझे इसका बहुत बड़ा खेद है। मृत्यु की खुशी इसलिए कम हो जाती है कि उसका कारण बना था एक भूला हुआ भाई। इसलिए धर्मबलि की चाहना नहीं की जा सकती। वह तो आनन्द की वस्तु तभी बनती है जब बिना बुलाए आती है। हम अपने छोटे से छोटे भाई की भूल पर हँसे नहीं। मगर बात तो यह है कि जब तक कोई भूल भयंकर रूप धारण कर नहीं लेती, उसे भूल माना ही नहीं जाता। जब तक उसकी यथेष्ठ निन्दा नहीं हो लेती तब तक वह दूर नहीं होती।

इस काण्ड का बहुत बड़ा राष्ट्रीय महत्व है। जाति के जीवन को नष्ट करने वाले दोष की ओर यह हमारा ध्यान खींचता है। हिन्दू और मुसलमान दोनों को ही अपना कर्तव्य चुन लेना चाहिए। यह दोनों की ही जाँच का मौका है। क्रोध दिखला कर हिन्दू अपने धर्म का अपमान करेंगे और उस एकता को रोक लेंगे जो एक दिन जरूर ही आयेगी। आत्मसंयम के द्वारा वे अपने आपको अपनी उपनिषदों और क्षमामूर्ति युधिष्ठिर के योग्य सिद्ध कर सकते हैं। एक व्यक्ति के पाप को हम सारी जाति का पाप न मान बैठें। बदला लेने के भाव हम न लावें। इसे हम एक हिन्दू के प्रति एक मुसलमान का पाप मानने के बदले एक वीर पुरुष के प्रति दूसरे भूले-भटके भाई की भूल मानें।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

मुसलमानों को अग्नि-परीक्षा में से होकर निकलना पड़ेगा। इसमें कोई शक नहीं कि छुरी और पिस्तौल चलाने में उनके हाथ जरूरत से अधिक साफ हैं। तलवार कुछ इसलाम का धर्मचिह्न नहीं है मगर इसलाम की पैदाइश हुई ऐसी स्थिति में जहाँ तलवार की ही तूती थी और अब भी है। यीशु के सन्देश का भी कुछ असर नहीं पड़ा क्योंकि उसे ग्रहण करने लायक योग्य परिस्थिति ही उपस्थित नहीं (पैगम्बर के उपदेशों के साथ भी तलवारें बहुत निकला करती हैं। इसलाम को अगर इसलाम यानी शान्ति बनना है तो उसे अपनी तलवार म्यान में ही रखनी होगी) इसका खतरा है कि मुसलमानों के मन्त्री इस कृत्य का समर्थन ही करें। उनके लिए और संसार के लिए यह दुर्भाग्य की बात होगी क्योंकि हमारा मसला सारे संसार का मसला है। अगर खुदा पर भरोसा करना है तो तलवार का भरोसा छोड़ना होगा। उनकी ओर से स्पष्ट शब्दों में सब ओर से निन्दा के प्रस्ताव होने चाहिए।

मैं अब्दुल रशीद की ओर से भी कुछ कहना चाहता हूँ। मैं उसे जानता नहीं। मुझे इससे मतलब नहीं कि उसने क्यों मारा? दोष हमारा है। अखबार वाले चलते-फिरते रोगाणु बन गए हैं। वे झूठ और शिकायत की तिजारत करते हैं। अपनी भाषा की गालियों के शब्दभण्डार को वे खाली कर देते और पाठकों के संशयरहित और प्रायः ग्रहणशील मनों में अपने विकार घुला देते हैं। अपने भाषाधिकार के मद से मत्त नेताओं ने अपने कलम और जबान पर लगाम लगाना सीखा ही नहीं है। गुप्त और छल-कपटपूर्ण प्रचार को अपना काला और भयंकर काम करने में रोकथाम का सामना नहीं करना पड़ा। इसलिए हम शिक्षित और अर्द्धशिक्षित लोग ही अब्दुल रशीद की मनोवृत्ति के लिए दोषी हैं। इसका निश्चय करना कि दो विरोधी दलों में किसका कितना दोष है, बेकार है। धर्मराज की तुला से दोषों का, न्याय-अन्याय का ठीक-ठीक बँटवारा कौन कर सकता है? आत्मरक्षा के लिए झूठ बोलना या बढ़ा कर कहना जरूरी नहीं है। ऐसी आशा रखना बहुत बड़ी बात है किन्तु स्वामी जी इतने बड़े थे कि जिससे यह आशा होती है कि उनका खून हमारा पाप धो देगा, हमारे दिलों के मैल को साफ कर, मनुष्य जाति के दो बड़े विभागों को एक कर देगा। स्वामी जी के जीवन का मुझे जो ज्ञान है, उसके विषय में अगले अंक में विचार करना पड़ेगा। (यं०इं०)

**(मोहनदास कर्मचन्द गांधी)**

---



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

हिन्दी

**नवजीवन**

सम्पादक .– मोहनदास करमचन्द गांधी

| | |
|---|---|
| वर्ष ६ | अंक २१ |

| | | |
|---|---|---|
| मुद्रक-प्रकाशक | अहमदाबाद, पौष सुदि ३, संवत् १९०३ | मुद्रणालय– |
| स्वामी आनन्द | गुरुवार, ६ जनवरी, १९२७ ई० | नवजीवन मुद्रणालय |

## श्रद्धानन्द स्मारक

यह उचित ही है कि हिन्दू महासभा की ओर से स्वामी श्रद्धानन्द के स्मरण के लिए धन की सहायता माँगी जाए। स्वामी जी संन्यास-धारण के बाद जिन कामों के लिए जीते थे, उसके लिए चन्दा इकट्ठा करने का हिन्दू सभा ने निश्चय किया है। इस निश्चय के लिए मैं उसे साधुवाद देता हूँ। वे काम हैं,—अस्पृश्यता निवारण, शुद्धि और संगठन। ५ लाख की अपील की गयी है अस्पृश्यता के लिए और शुद्धि और संगठन के लिए भी उतने की ही। जिसे साधारणतः शुद्धि समझा जाता है, उस अर्थ में शुद्धि-आन्दोलन की आवश्यकता में मेरा विश्वास अब भी नहीं है। पापियों की शुद्धि निरन्तर आन्तरिक क्रिया है। उन लोगों की शुद्धि जो न तो हिन्दू ही रहना चाहते हैं, धर्म-परिवर्तन नहीं है बल्कि प्रायश्चित है। शुद्धि का तीसरा पहलू है असली धर्म परिवर्तन। इस ज्ञान और सहन युग में मैं उसकी जरूरत नहीं मानता। मैं धर्मपरिवर्तन का विरोधी हूँ चाहे कोई उसे हिन्दुओं में शुद्धि, मुसलमानों में तबलीग या क्रिस्तानों में धर्मपरिवर्तन कहे। धर्मपरिवर्तन तो हृदय की क्रिया है और उसे केवल भगवान ही जान सकता है। उसे तो अपने आप ही छोड़ देना होगा। मगर धर्मपरिवर्तन पर मेरे मत प्रकाश करने का यह स्थान नहीं है। जिनका इसमें विश्वास नहीं है उन्हें बिना किसी विरोध के अपने रास्ते पर चलने का तब तक पूरा अधिकार है जब तक वे उचित सीमाओं के अन्दर रहते हैं, यानि जब तक कोई और या धोखा या लालच नहीं दी जाती है और जब तक दोनों पक्षों को पूरी स्वतन्त्रता है और वे सयानी उम्र और परिपक्व बुद्धि के हैं। इसलिए जिनका शुद्धि में विश्वास है उन्हें इस अपील पर सहायता देने का पूरा अधिकार है।

अगर वह अपनी हस्ती अलग रखना चाहे तो हर एक सम्प्रदाय को अपना संगठन करने का पूरा अधिकार है, बल्कि उसके लिए यह परमावश्यक है। मैं इससे इसलिए अलग रहा हूँ कि संगठन के विषय में मेरे विचार कुछ अनोखे हैं। संख्या से अधिक गुण पर मेरा विश्वास है। आजकल संख्या पर, बल्कि गुण के बदले भी उसी पर विश्वास रखने की चाल है। समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र में निस्सन्देह संख्या का स्थान है। केवल मैं ही इसका उस प्रकार संगठन करने में असमर्थ हूँ जैसा कि आजकल हो रहा है। इसीलिए मेरे लिए अछूतोद्धार के ही कोष की कीमत है। इसकी अपनी निराली ही शक्ति है। हिन्दूधर्म के



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सुधार और इसकी सच्ची रक्षा के लिए अछूतोद्धार सबसे बड़ी वस्तु है। इसमें सब कुछ शामिल है और इसलिए हिन्दू धर्म का यह सबसे काला दाग अगर मिट जाए तो शुद्धि और संगठन से जो कुछ मिल सकेगा, वह सब हमें इससे अपने आप ही मिल जायेगा। और मैं यह इसलिए नहीं कहता कि अछूतों, जिन्हें हर एक हिन्दू को गले लगाना चाहिए, की बहुत बड़ी संख्या है बल्कि इसलिए कि एक पुराने और असभ्य रिवाज को तोड़ डालने की ज्ञान और उससे होने वाली शुद्धि से कितनी ताकत मिलेगी, जो रोकी न जा सकेगी। इसलिए अस्पृश्यतानिवारण एक आध्यात्मिक क्रिया है। स्वामी जी इस सुधार के जीवित मूर्ति थे क्योंकि वह इसमें आधा-साझा सुधार नहीं चाहते थे, वे समझौता नहीं कर सकते थे, दब नहीं सकते थे। अगर उनकी चलती तो वह बात की बात में हिन्दू धर्म से अस्पृश्यता को निकाल बाहर करते। वे हर एक मन्दिर को, हर एक कुएँ को सबकी बराबरी के हक के साथ खोलते और इसका हर फल भुगत लेते। स्वामी श्रद्धानन्द जी के लिए इससे अच्छा कोई स्मारक नहीं सोच सकता कि हर एक हिन्दू आज से अपने दिलों से अस्पृश्यता की अपवित्रता निकाल दे और उनके साथ सगों के समान बर्ताव करे। उस आदमी की पैसा की सहायता तो, मेरी समझ में, अस्पृश्यता को हिन्दू धर्म से सदा के लिए निकाल डालने की उसके दृढ़ निश्चय का चिन्ह भर होगी।

---

चि० इन्द्र,

आज मुझको शान्ति है क्योंकि मेरा मौन का दिन है। तुझको लिखने का दिल तो हमारा होता था परन्तु मैं शान्ति चाहता था। मैंने तुमसे शोक प्रदर्शित नहीं किया है। न मैं करना चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ कि इस मृत्यु को हम मृत्यु न समझें। धर्म को समझने वाला तो किसी अवसर पर मृत्यु का शोक नहीं करेगा। परन्तु पिताजी की मृत्यु तो वीर-पुरुष के लिए अभिनन्दनीय भी हो सकती है।

और एक चीज मैं तुम्हारे पास से चाहता हूँ। हृदय में अब्दुल रशीद या मुसलमानों के प्रति रोष का स्थान न देना। तुम तो पिताजी को मेरे से ज्यादा जानते थे। परन्तु जब तक मैं उनको जान सका था, उनके हृदय में किसी मनुष्य से घृणा न थी। वही चीज मैं तुमसे चाहता हूँ।

मैं यह भी चाहता हूँ कि जिस वीरता से पिताजी ने अपना कार्य किया उसी वीरता के साथ तुम भी करते रहो और उनके पवित्र स्मरणों को सुशोभित रखो।

पिताजी के अन्तिम समय का सम्पूर्ण वर्णन मैं चाहता हूँ। धर्मसिंह की तबियत अब कैसा है। मैं भ्रमण में हूँ इसलिए पत्र साबरमती ही भेजना।

**मोहनदास कर्मचन्द गाँधी**
**का आशीर्वाद**

राहैल
सोमवार

---



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

इन पत्रों में स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज का व्यक्तित्व मुखरित होता है। उन्होंने घृणा एवं पाप को कभी अपने जीवन में फटकने नहीं दिया—गाँधी जी के पत्रों से स्पष्ट है।

लार्ड चैम्सफोर्ड को उन्होंने साफ बता दिया था कि उनके राष्ट्रीय प्रेम एवं भारतीय संस्कृति की रक्षा में क्या विचार हैं ? अंग्रेज सरकार से एक पैसा भी अनुदान लेना उन्होंने पाप समझा। उनके ऐसे आदर्शमय जीवन से सम्बन्धित सामग्री का प्रदर्शन इस विशाल कक्षा में किया गया है। धन उपलब्ध होने एवं सामग्री प्राप्त होने पर उसका और विस्तार किया जाएगा।

— — — —



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

# पुरातत्व संग्रहालय की पाण्डुलिपियाँ

—डा० राकेशकुमार शर्मा
प्रवक्ता, इतिहास विभाग, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग के आधीन 'पुरातत्व संग्रहालय' का स्थान न केवल उत्तर प्रदेश अपितु समस्त भारतवर्ष के विश्वविद्यालयों के अन्तर्गत आने वाले संग्रहालयों की श्रेणी में महत्वपूर्ण है।

जहाँ संग्रहालय के विभिन्न कक्षों में विभिन्न वस्तुओं का संग्रह है, वहाँ हस्तलिखित ग्रन्थों का भी अच्छा संग्रह विद्यमान है। इसके अन्तर्गत अनेक ग्रन्थ अपनी प्राचीनता, विषय अथवा भाषा के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण हैं। इस संग्रह में विभिन्न धर्मों को प्रतिपादित करने वाली पाण्डुलिपियाँ संग्रह करने का सफल प्रयास किया गया है। इन ग्रन्थों को इनके समस्त परिचय सहित रखा गया है, जिससे न केवल दर्शक अपितु शोधार्थी भी लाभान्वित होते हैं।

हिन्दू-धर्म के विभिन्न पवित्रग्रन्थों में बालिमकि द्वारा रचित 'रामायण' की कई प्राचीन प्रतियाँ सटीक तथा फारसी में लिखित संग्रहीत हैं। इनमें से पंडित विश्वनाथ ईशापुर वाले द्वारा लिखित "अयोध्याकाण्ड' विशेष महत्वपूर्ण है। संस्कृत भाषा में लिखे इस ग्रन्थ का आकार 9"×8" है। 'महाभारत' के कई प्रकार के संस्करण, जिनमें फारसी अनुवाद तथा छन्दोबद्ध 'कर्ण-पर्व' विशेषतः उल्लेखनीय हैं, संग्रहीत हैं।

'श्रीमद्भागवतगीता' की भी अनेक प्रतियों को प्रदर्शित किया गया है जिनमें से गुरुमुखी में लिखित छोटे आकार 3.5"×2" की गीता, पंचरत्न गीता तथा गीता (विष्णु सहस्रनाम) भी संग्रहीत है। इनकी भाषा संस्कृत है।

काश्मीरी (शारदा) लिपि में लिखित 'प्रार्थना पुस्तक' भाषा के दृष्टिकोण से प्राचीन उदाहरण है। इसी श्रेणी में जौनसारी भाषा में लिखित पुस्तक 'तन्त्र-मन्त्र' विषय को प्रतिपादित करती है। इसका आकार 7"×4.5" है।

बंगला हस्तलिपियों का भी संग्रहालय में अच्छा संग्रह है। इनमें 12"×4.5" के आकार वाली 'देवी-स्तोत्र' तथा 15"×3" के आकार वाली 'मनु-संहिता' विशेष रूप से



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

उल्लेखनीय हैं। इन ग्रन्थों में हिन्दू-धर्म के क्षेत्रीय भाषा-भाषी लोगों में लोकप्रियता की अच्छी झलक मिलती है।

लगभग 16वीं शताब्दी में लिखित तिब्बती भाषा की दो पाण्डुलिपियाँ, लिपि की दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय हैं जिनमें से एक 'तन्त्र-विद्या' पर आधारित पुस्तक का आकार 22"×7.4" है।

प्राचीन पुस्तकों में 'श्रीमद्भागवत पुराण' 100 वर्षों से भी अधिक प्राचीन है। यह काश्मीरी कागज पर लिखा गया है तथा इस पाण्डुलिपि की विशेषता यह है कि इसमें अनेक प्रकार के लुभावने रंगीन चित्र भी बने हैं।

संस्कृत भाषा के ग्रन्थों की सूची में 'ब्रह्मसूत्र' नामक पाण्डुलिपि भी संग्रहीत है। इसका आकार 15"×6" है। इसी के साथ 'स्त्रोत रत्नाकर' नामक ग्रन्थ है जो कि श्री गंगाप्रसाद द्वारा रचित है। इसी श्रेणी में श्री महेलाल द्वारा हस्तलिखित 'राम चन्द्रिका' भी अवधी-देवनागरी का 10"×6" का सुन्दर ग्रन्थ है। 'वेद गीताँजलि' नामक पुस्तक भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। यह श्री वेदव्रत द्वारा रचित वैदिक धर्म पर संस्कृतभाषा की 7.5"×4.5" के आकार की पाण्डुलिपि है।

पाण्डुलिपियों के संग्रह में प्राचीन-काल में लेखन हेतु प्रयुक्त होने वाले कागजों का संकलन भी ज्ञानवर्धक तथा मनोरंजन का विषय है। इनमें भोजपत्र तथा ताड़पत्र मुख्य हैं। इसी में ताड़पत्र पर उड़िया भाषा में लिखित 'तुलवीणा' नामक ग्रन्थ अपना विशिष्ट स्थान बनाए हुए है। यह भोजपत्र तथा ताड़पत्र आज भी संग्रहालय में प्राचीन हस्तलिखित कला के प्रमाण हैं।

सिख–धर्म के पवित्र साहित्य में श्री गुरुग्रन्थसाहिब (वाणी श्री गुरुनानकदेव महाराज) की बड़े आकार की प्रतियाँ संग्रहीत हैं। इन पाण्डुलिपियों में एक 13"×16" के आकार में प्रदर्शित 'दशमग्रन्थ' सिखों के प्रसिद्ध महापुरुष श्री गोविन्दसिंह द्वारा हस्त-लिखित है। इसके अतिरिक्त गुरुअर्जुनदेव द्वारा सम्पादित एक अन्य पाण्डुलिपि भी कम महत्व की नहीं है। यह ग्रन्थ विक्रमी सम्वत् 1816 का है तथा इसका आकार 13.5" ×12.5" है।

हिन्दू धर्म तथा सिख धर्म के अतिरिक्त मुस्लिम धर्म के पवित्र ग्रन्थों को भी संग्रहालय में संग्रहित किया गया है। इनमें सम्राट औरंगजेब द्वारा हस्तलिखित कुरान शरीफ के मूल पृष्ठों के चित्रसहित मुद्रित हिन्दी अनुवाद की प्रतियाँ संग्रहित हैं। इसी श्रेणी में 'कुरान-मजीद' भी ऐसा ही साहित्य है जो मुस्लिम-धर्म को हिन्दीभाषियों में प्रचार करने तथा तत्कालीन धार्मिक स्थिति को स्पष्ट करता है। इनके अतिरिक्त 'फारसी गुलिस्ताँ' की कई प्रतियाँ प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों में उल्लेखनीय हैं।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

संस्कृत, हिन्दी, उर्दू, बंगला, तिब्बती तथा पंजाबी आदि भाषाओं और लिपियों की हस्तलिखित पोथियों को शीशे के शो-केस में सुन्दर ढंग से प्रदर्शित किया गया है। चमड़े जैसे पक्के और कुछ काला रंग लिए एक चिकने कागज पर सुनहरी अक्षरों में तिब्बती लिपि की एक बड़ी पाण्डुलिपि संग्रहीत है। इसकी लेखनशैली अत्यधिक आकर्षक है।

संग्रहालय में उपर्युक्त संग्रह सहित लगभग 200 पाण्डुलिपियों का संग्रह है जो संस्कृत तथा अन्य भारतीय भाषाओं में है। प्रदर्शित पाण्डुलिपियों के अतिरिक्त, शेष संग्रह को संग्रहालय में स्थानाभाव के कारण प्रदर्शित नहीं किया जा सका है।

---



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

# मृदिकापात्र संग्रह

**ब्रजेन्द्रकुमार जैरथ**
संग्रहालय सहायक, पुरातत्त्व संग्रहालय, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

आज का मानव लगातार प्रगति की सीढ़ियों को लाँघता हुआ मशीनी युग से गुजर रहा है। हर छोटी-बड़ी वस्तु मशीनों के जरिए बहुत जल्द निर्मित हो रही है। इन मशीनों की उपयोगिता के रहते कुछ वस्तुएँ ऐसी हैं जो आज भी परम्परागत तरीके से मानवीय शक्ति तथा कलाकौशल के जरिये तैयार की जाती हैं और जो अपनी अहमियत, अपनी ख़ूबसूरती, अपने इतिहास की कहानी दोहराती हैं।

मानवसभ्यता के विकास की कहानी काफी कुछ प्राचीन मिट्टी के बर्तनों में भी छिपी है। भारत में आज भी जगह-जगह मिट्टी के बर्तन बनते हैं जिनकी अपनी खास विशेषता है। ये बर्तन आमतौर पर कुम्हार चाक से बनाते हैं। बड़े बर्तन जैसे नांद तथा कुण्डे आदि पीटकर बनाए जाते हैं। खिलौने बनाने के लिए साँचे आदि इस्तेमाल किए जाते हैं।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के पुरातत्व संग्रहालय में मृदिकापात्र तथा मृणमूर्ति कक्ष में प्रागसैन्धव मृदिकापात्र से लेकर मध्यकालीन मृदिकापात्र देखने को मिलते हैं जिनका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है।

**प्रागसैन्धव मृदिकापात्र**

यह काल लगभग ०-५००० ई०पू० है। इस संस्कृति के दो प्रकार के मृदिकापात्र कक्ष में प्रदर्शित हैं। इन मृदिकापात्रों में कुछ ऐसे चित्रित पात्र देखने को मिलते हैं जिन पर एक के अन्दर एक गोले, पत्तियों के आकार, धारीदार तथा तिरछी रेखाएँ अंकित हैं जिनके बीच बिन्दु बना दिए गए हैं तथा इनके ऊपर-नीचे समानान्तर रेखाएँ बनी हुई हैं। इसके अलावा आड़ी-तिरछी लाइनों के नमूने व धारीदार रेखाएँ जिनका ऊपरी हिस्सा समानांतर रेखा को छूता है, अंकित हैं। कुछ पात्रों पर छोटे-छोटे गोले व कंघी के-से आकार पूरी सतह पर अनियमित रूप से बने हुए हैं। इनका रंग सामान्यत: भूरा है।

इसके अतिरिक्त जो दूसरे किस्म के मृदिकापात्र मिलते हैं उनका रंग भी मूलत:



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भूरा ही है जिस पर काले रंग से एक के अन्दर एक गोले चित्रित हैं जो चार बिन्दुओं पर लम्ब व समानान्तर रेखाओं से जुड़े हुए हैं। इसके अलावा कुछ पात्रों पर दो-दो रेखाओं के घेरे चित्रित हैं जिनमें एक घेरे के बीच वृत्त तथा दूसरे के बीच चतुष्कोण हैं जिनके बीच वृत्त दर्शाए गए हैं। इन दोनों नमूने के बीच दो समानांतर रेखाएँ खिची हैं जिनके मध्य अपेक्षाकृत एक मोटा घेरा खिचा है। इन घेरों के नीचे एक और मोटा घेरा जिस पर पत्तियाँ लटक रही हैं, चित्रित हैं।

वीथिका में जो मृदिकापात्र प्रदर्शित हैं उनमें सिर्फ एक पात्र के अतिरिक्त किसी भी पात्र का कोई निश्चित आकार नहीं है। वह एक पात्र Dish के आकार का है।

**सिंधु मृदिकापात्र**

इसका काल लगभग ३००० ई०पू० है। ये पात्र सर्वेक्षण के दौरान राखीगढ़ी (हिसार), बनावली (फतेहाबाद), मिताथल (भिवानी), मानहेर (भिवानी), मिरजपुर (हिसार), पौली (जीन्द) व गिरोड़ (रोहतक) क्षेत्रों से एकत्रित किए गए हैं और ये सभी स्थान हरियाणा राज्य में हैं।

सिंधु संस्कृति के प्रदर्शित मृदिकापात्र भी दो प्रकार के हैं। एक पर काले रंग से मछली की बाह्य त्वचा का नमूना व पत्तियाँ चित्रित हैं। यह पात्र अति मुलायम मिट्टी व नियमित ताप में निर्मित हैं। फलस्वरूप पूरी सतह भूरे रंग की है। ये पात्र मुख्यत: काफी भारी व मजबूत हैं। बड़े-बड़े जार, कटोरे व छोटे घड़ों के आकार में ये पात्र देखने को मिलते हैं। इन पर चित्रकारी बहुत सावधानी से की गई है। जार के ऊपरी हिस्से पर दो मोटे घेरे काले रंग में चित्रित हैं जिनके बीच त्रिकोण बने हुए हैं। इसके अतिरिक्त बाकी हिस्से पर आड़े-तिरछे नमूने चित्रित हैं। कटोरे पर पतले समानान्तर रेखाओं में घेरे खिंचे हैं व छोटे घड़े पर तीन पतले घेरे दिखाई देते हैं। ये घेरे, घड़े के ऊपरी हिस्से में ही बने हैं।

दूसरे किस्म के जो पात्र मिलते हैं वह कुछ खुरदुरापन लिए हैं। उन पर किसी भी तरह का कोई लेप नहीं किया गया है। इनके लिए जो मिट्टी इस्तेमाल की गई है वह भुरभुरी, गोबर, घास अथवा रेत आदि का मिश्रण है। इन पात्रों के ठीकरों में जो कालापन देखने को मिलता है उससे लगता है ये आग में अच्छी तरह से पकाए नहीं गए।

इन पात्रों पर गीलेपन में ही संभवतः सरकण्डे, चाकू अथवा कंघी आदि की सहायता से सादे चित्र अंकित किए गऐ हैं जैसे कि हल्का घुमाव लिए समानान्तर रेखाएँ जो कि कहीं धारीदार पट्टियाँ व कहीं ऊपर से नीचे की ओर आती पट्टियों से कटती हैं। इसके अतिरिक्त अंगुली के अग्रभाग के चिह्न देखने को मिलते हैं।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ये पात्र दौलतपुर I, मिताथल 11B, सिस्वाल I (हरियाणा), रंगपुर, अहार, प्रकाश, जोखा तथा कनेवाल आदि स्थानों से प्राप्त हुए हैं।

**भूरे मृदिकापात्र :**

ये अच्छे किस्म के भारी व मजबूत पात्र हैं। इनकी सामान्यत: भूरी सतह है। ये पात्र अच्छी मुलायम मिट्टी से तीव्र गति के चाक पर बनाए गए हैं, जिसके पश्चात सामान्य ताप में पकाया गया है। लेकिन कुछ पात्र निम्नस्तरीय मिट्टी से भी निर्मित हैं।

ये पात्र सामान्यत: बड़े मटके, जार के आकार में हैं। कुछ ऐसे पात्रों के टुकड़े भी मिले हैं जिनमें सुराख बने हैं। परन्तु इनके आकार का अनुमान लगाना मुश्किल है। ये पात्र जो यहाँ प्रदर्शित हैं, हरियाणा राज्य से मिले हैं।

**अभ्रकमिश्रित मृदपात्र**

कुछ मृदभाण्ड अभ्रकमिश्रित मिट्टी से (Micaceous Red ware) से बनाये गये हैं और ये काले रंग से चित्रित हैं। एक मृदिकापात्र जिसका कोई आकार नहीं है, पर चित्रित एक मोटा घेरा, तीन पतले सफेद रंग के घेरों से काटा गया है।

**भूरे पात्र**

कुछ Grey Ware के मृदिकापात्र भी यहाँ दर्शाए गए हैं। ये विभिन्न आकारों में हैं जैसे कि बड़े जार, घड़े, तश्तरी, पैंददार तश्तरी का एक हिस्सा और कटोरे आदि में देखने को मिलते हैं।

मृदिकापात्रों के अलावा, मृणमूर्तियाँ तथा पत्थर की वस्तुएँ मुख्य हैं।

मृणमूर्तियों में केक्स (Cakes), डिस्क के आकार में पात्र, स्किन रबर (Skin rubbers), मनके, पहिये व चूड़ियाँ आदि शामिल हैं।

टेराकोटा केक्स (Terracotta Cakes) की संख्या चार है। Pottery discs विभिन्न आकार में हैं। संभवत: यह बच्चों द्वारा किसी खेल में प्रयोग की जाती थीं। Pottery discs में आठ तो पूर्णत: साबुत नमूने हैं और सात टूटे हुए हैं।

दो Skin rubbers भी यहाँ प्रदर्शित हैं जिनमें एक तो टूटा हुआ है और एक साबुत है। इसके अतिरिक्त मृणमूर्तियों के बने मनके प्रदर्शित हैं। दो नमूने पहियों के हैं



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जो अलग-अलग आकार में हैं। चूड़ियाँ भी दो प्रकार की देखने को मिलती हैं। एक तो Glazed लेप से बनाई गयी हैं तथा दूसरी Terracotta से। Glazed लेप की चूड़ियों की संख्या १२ है और सभी टूटी हुई हैं। Terracotta चूड़ियों की संख्या ९ है तथा वे विभिन्न आकारों में हैं।

**नसीरपुर—**

इस स्थान से सर्वेक्षण के दौरान गेरुये रंग के मृदिकापात्र प्राप्त हुए हैं। यह स्थान, तालुका मंगलौर (जिला सहारनपुर) में स्थित है। सन १९५० में बी०बी० लाल ने दो Copper-hoards Sites पर प्रयोगात्मक उत्खनन किया। ये स्थान बसौली (जिला बदायूँ) तथा राजपुर-परसु (जिला बिजनौर) उ० प्र० में हैं। यहाँ उत्खनन के दौरान कुछ नए किस्म के मृदभाण्ड मिले, जिनका नाम गेरुये रंग के मृदभाण्ड रखा गया, (Lal—1951 : 36–39)। यह मृदिकापात्र medium grained मिट्टी का बना हुआ व कम आग में तपाया गया था। उत्खनन से प्राप्त हुए मृदभाण्ड खराब दशा में तथा rolled थे। मृदिकापात्र पर ochre का पतला लेप था जिसका रंग नारंगी-लाल से गहरे लाल तक मिलता है। ऐसे ही पात्र हस्तिनापुर से भी मिले हैं (Lal—1954–35–10)।

इस उत्खनन से 40 नए क्षेत्रों का पता मिलता है। पात्रों का विस्तारक्षेत्र पूर्व में मायापुर (जिला सहारनपुर) से लेकर दक्षिण में सैपई (जिला इटावा) तक फैला हुआ है।

गेरुये रंग के मृदभाण्ड वाली संस्कृति का प्रारम्भ साधारणतया नदियों के किनारे पाया जाता है और आकार में (200 × 200m) बहुत छोटे हैं। (Dikshit–1979—1 : 286)। टीलों की ऊँचाई कम है और बहुत से स्थानों जैसे बहादराबाद, बिसौली, राजपुर-परसु और सैपई में किसी टीले का कोई चिह्नमात्र भी नजर नहीं आता।

पात्रों को बनाने में इस्तेमाल की गई मिट्टी काफी मुलायम है परन्तु समानरूप से आग में तपे हुए नहीं हैं। **Fabric medium** है तथा मटकों पर प्रायः लेप किया गया है। कहीं-कहीं मोटा लेप प्रयोग में लाया गया है।

नसीरपुर से जो पात्र प्राप्त हुए हैं वे मुख्यतः घड़े, संग्रहण जग, घड़े के आधार आदि के आकार में हैं।

**अहार संस्कृति—राजस्थान—**

यह स्थान उदयपुर के निकट है। यहाँ पर श्री आर०सी० अग्रवाल ने उत्खनन



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

किया था। इस उत्खनन के दौरान काले और लाल एवं सफेद चित्रित पात्र व Burnished लाल व काले पात्र हैं। ये मृदिकापात्र कटोरे व घड़े के विभिन्न आकारों में हैं। इन पर सामान्यतः समानान्तर काले घेरे चित्रित हैं।

**कुन्दनपुर टीप (बिजनौर)—**

इस स्थान पर सर्वेक्षण के दौरान Cholerlithic मृदभाण्ड व Historic मृदभाण्ड प्राप्त हुए।

Cholerlithic मृदभाण्डों में ऐसे पात्र मिलते हैं जिन पर गीली अवस्था में ही फूल, तने व कंघी आदि अंकित किए गए हैं। सिर्फ एक पात्र जिसका कोई निश्चित आकार नहीं है, तथा Grey ware का है, प्रदर्शित है।

ऐतिहासिक (Historic) पात्रों में खुरदुरे लाल पात्र, चित्रित लाल पात्र, Burnished काला पात्र व मुस्लिम चमकदार पालिश के पात्र प्राप्त हुए हैं। जो चित्रित लाल मृदिकापात्र थे वे सब मटके के आकार में थे। यद्यपि कुछ पात्र खराब हालत में भी हैं, इन पर काले रंग से चित्रकारी की गई है।

एक खूबसूरत मृदभाण्ड जो कि मध्यम आकार का जग है, अति शोभाजनक है। इसके अलावा संग्रहणपात्र, मटके, छोटे कटोरे तथा सम्भवतः मटके के ढक्कन तथा साथ ही साथ एक बड़ा स्वास्तिका भी प्राप्त हुए हैं।

**सरसावा—**

यह एक प्राचीन स्थान है तथा जिला सहारनपुर के अन्तर्गत आता है। इस गाँव में सर्वेक्षण के दौरान एक प्राचीन टीला पाया गया। यह टीला, गांव से लगभग 50 मीटर की दूरी पर, पश्चिम दिशा में स्थित है।

टीले का क्षेत्रफल लगभग 2 Km. × 1·5Km. तक फैला हुआ है। टीले के बीच में एक कच्ची सड़क बनी हुई है। इसी कारण टीले का Section दृष्टिगत हुआ है। इस Section की ऊँचाई लगभग 2·25 मीटर है। Section के निचले हिस्से से सादे Grey पात्र, चित्रित भूरे रंग के पात्र, काले व लाल पात्र (Black and Red ware), Northern Black Polished Ware, खुरदुरे लाल पात्र, Incised लाल पात्र, Burnished लाल पात्र, चित्रित लाल पात्र तथा मुस्लिम चमकदार पालिश के पात्र प्राप्त हुए हैं जो मुख्यतः कटोरे, मटके, तश्तरी व ढक्कन आदि के आकारों में हैं। इसके अलावा कुछ मध्यकाल के मृदभाण्ड भी मिले हैं।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

**चित्रित धूसरपात्र—**

चित्रित धूसरपात्र की उत्पत्ति का समय लगमग १०००–१५०० ई०पू० माना गया है। इनमें कटोरों पर जो चित्रकारी की गई है उसमें Concentric चक्र तिरछी धारियों से जुड़े हैं तथा एक काला घेरा पात्र के ऊपरी, भीतरी हिस्से पर चित्रित है।

**Northern Black Polished Ware** सरसावा के अतिरिक्त राखीगढ़ी (हिसार) तथा गोरोड़ (रोहतक) हरियाणा से भी प्राप्त हुए हैं।

**वीरभद्र (देहरादून)—**

इस स्थान से सर्वेक्षण के दौरान जो मृदिकापात्र प्राप्त हुए, उनमें सादे लाल पात्र व चित्रित लाल पात्र हैं, जो मटके, संग्रहणपात्र, डिश, पेंचे पर डिश, पात्र-आधार, गहरे कटोरे, पात्रों के टूटे हत्थे, मटके के ढक्कन आदि आकार में हैं।

इन पात्र का निर्माणकाल 75 BC—600 AD माना गया है।

**प्रारम्भिक ऐतिहासिककाल—**

ये मृदिकापात्र विभिन्न प्रकार के हैं। जैसे—खुरदुरे लाल पात्र, सादे लाल पात्र, चित्रित लाल पात्र, फूलदान, कटोरे, खूबसूरत छोटा मटका आदि आकार में हैं जिन पर काले रंग से क्षैतिज रेखाएँ बनी हैं जिनके बीच में एक धारीदार रेखा बनी है।

**मध्यकालीन मृदिकापात्र—**

यह मृदिकापात्र दो स्थानों से सर्वेक्षण के दौरान प्राप्त किए गए। ये स्थान हैं—राखीगढ़ी (हिसार) व गिरोड़ (रोहतक) दोनों स्थान हरियाणा राज्य में हैं।

इनमें अंकित लाल पात्र व मुस्लिम चमकदार पालिश किए पात्र मिले हैं।

पाँच मनके जो प्रागैतिहासिक काल के हैं यहाँ प्रदर्शित हैं। इसके अतिरिक्त, ईंटें, जो क्रमश: शुंगा (कौशाम्बी), कुशान (कौशाम्बी) तथा गुप्तकाल (वीरभद्र-देहरादून) की हैं, यहाँ प्रदर्शित हैं।

---



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

# गुरुकुल संग्रहालय की मुद्रा-वीथिका

डा० सुखवीर सिंह
सहायक क्यूरेटर, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय संग्रहालय

धातु के एक निश्चित आकार के टुकड़े, जिनके भार एवं मूल्य की प्रामाणिकता किसी संगठन या सत्ता द्वारा की गई हो, सिक्के कहलाते हैं। सिक्कों का चलन मनुष्य की बदली आवश्यकताओं की आपूर्ति में विनिमय की कठिनाइयों का प्रतिफल है। उत्खनन एवं साहित्य के प्रमाणों के अनुरूप भारत में सिक्कों का प्रचलन अब से लगभग २५०० वर्ष पूर्व से हुआ। तब से निरन्तर ये प्रसरण में रहे हैं।

प्राचीन भारतीय इतिहास के निर्माण में भी इन्होंने महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इनसे तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक दशा का अच्छा परिचय प्राप्त होता है। कभी-कभी तत्कालीन कला और साहित्य पर भी इनसे प्रकाश पड़ता है। प्राचीन भारतीय इतिहास में अनेक ऐसे स्थल हैं जिनकी जानकारी केवल सिक्कों के माध्यम से ही हुई है। राजनीतिक परिवर्तनों के साथ ही ये सिक्के विभिन्न नामों से पुकारे गए हैं, जैसे निष्क, सलमान, दीनार, मोहर एवं रुपया आदि।

वर्तमान समय में इस संग्रहालय की मुद्रावीथिका में विभिन्न धातुओं के ४०४३ सिक्के संग्रहीत किए गए हैं। इन सिक्कों को क्रय, उपहारस्वरूप तथा पुरातात्विक सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त किया गया है। इन सिक्कों में आरम्भिक आहत (पंचमार्क) मुद्राओं से लेकर अर्वाचीनकाल तक के सिक्के संग्रहीत हैं। इस समस्त संग्रह को चार उपविभागों में विभक्त किया गया है—प्राचीन, मध्य, वर्तमान और विदेशी। इनमें प्राचीन आहत मुद्राएँ पुरातात्विक क्षेत्र में विशेष महत्त्व रखती हैं। इस संग्रहालय में लगभग १३० आहत मुद्रायें संग्रहित की गयी हैं।

प्राचीनतम भारतीय मुद्रायें (ई० पू० २०० से ६०० तक) चांदी एवं ताम्र के विभिन्न आकारों की आहत मुद्रायें हैं। इन पर एक ओर सामान्यतः ५ चिन्ह हैं तथा दूसरी ओर एक से लेकर बारह तक चिन्ह हैं। इन्हें पण, पाद एवं मासक कहा गया। भार में एक पाद ५०.५२ ग्रेन तथा मासक २ या ३ ग्रेन होता था। इनमें प्रमुख आकार शलाका एवं प्याला प्रकार हैं, यद्यपि ये गोल, वर्गाकार, आयताकार आकारों में भी मिलते हैं। बढ़ती आवश्यकता के कारण शीघ्र ही आहत मुद्रायें सांचे से ढालकर बनायी जाने लगीं। इसी कोटि में ही आगे चलकर लेखविहीन तांबे के ढलुवा एवं जनपदीय सिक्के मिलते हैं।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

छठी शती ई० पू० में उत्तर भारत में छोटे-छोटे राज्य स्थापित हो गए जिनके द्वारा चलाये गये सिक्कों पर ब्राह्मी भाषा में राजा का नाम एवं राज्य के चिन्ह पृष्ट भाग पर एवं पुरोभाग पर देवता की आकृति प्रदर्शित की गई। पाणिनि (चौथी शती ई० पू०) ने भी अपने एक सूत्र में आहत कार्षापण का उल्लेख किया है। इन मुद्राओं को देखकर पाणिनि के "रूपादाहत प्रशंसयोर्यप्" सूत्र का अर्थ ठीक प्रकार से समझा जा सकता है।

यहाँ कुषाणकालीन सिक्के भी अपना विशिष्ट महत्त्व रखते हैं। भारत में विदेशी आक्रमणकारियों के रूप में ग्रीक, सीथियन, पार्कियन एवं कुषाणों के आगमन से सिक्कों के निर्माण में निखार आया और यहाँ सोने, चाँदी, ताँबे एवं मिश्रित धातुओं के सिक्के भी चलन में आये, जिन्हें क्रमशः स्टेटर, ड्रकम, चेलकान एवं ओबोल नाम दिया गया। इन पर राजा की आकृति एवं लेख एक ओर, और देवता दूसरी ओर उकेरे गए हैं। इस संग्रहालय में वीमकड़फाइसिस, कनिष्क, हुविष्क और वासुदेव आदि कुषाणराजाओं के सिक्के संग्रहीत हैं। ये अधिकतर ताँबे के हैं जो तत्कालीन आर्थिक स्थिति के साथ-साथ प्रतिमाविज्ञान के भी सजीव प्रमाण हैं। यहाँ राष्ट्रकूट एवं यौधेयों के सिक्के भी दर्शनीय हैं।

भारत में गुप्तशासकों का समय सिक्कों के इतिहास में भी विभिन्नताओं और कारीगरी के लिए विशेष महत्त्व रखता है। इस समय के भी अनेक सिक्के संग्रहीत हैं। इन सिक्कों को देखने से स्पष्ट होता है कि इस काल के शासकों ने सिक्कों से विदेशीपन मिटाकर भारतीय परम्परा के अनुसार ही बनवाया। इन सिक्कों में चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य की धनुर्धर शैली की स्वर्णमुद्रा और स्कन्दगुप्त की धनुर्धर शैली का ताम्र सिक्का भी दर्शनीय है। इस समय के सोने के सिक्के दीनार कहलाये, ये वजन में कुषाणकालीन सिक्कों जैसे ही हैं। इस समय के चाँदी तथा ताँबे के सिक्के भी संग्रहीत हैं। इनमें से कुछ सिक्के वे हैं जो चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य ने पश्चिमी क्षत्रपों को हराने के बाद चलाये, जो आकार एवं माप में छोटे हैं।

भारत के विविध युगों तथा प्रदेशों और गणतन्त्र में विलीन तत्कालीन रियासतों तथा शासनखण्डों के सिक्कों में कुछ उल्लेखनीय हैं—इन्दौर, गोरखपुर, कन्नौज, उदयपुर, मैसूर, ट्रावनकोर, सौराष्ट्र, गुजरात, बड़ौदा, नेपाल, हैदराबाद, जोधपुर, देवास, झाँसी, मालवा, भरतपुर, नवानगर, पोरबन्दर, नाभा, रतलाम, मालेर कोटला, टिहरी, भोपाल, टौंक, बीकानेर, उज्जैन, जैसलमेर, पटियाला, चित्रकूट आदि।

संग्रहालय में कन्नौज और गुर्जर प्रतिहार राजाओं के सिक्के भी संग्रहीत हैं। यहाँ मध्यकालीन सिक्कों में वृषभ एवं अश्वारोही प्रकार के सिक्कों में, गुलाम वंश, खिलजी वंश तथा तुगलक वंश आदि के अनेक सिक्के संग्रह किए गए हैं। मुस्लिम सिक्कों पर अरबी



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

भाषा में लेख अंकित किए गए हैं, जिनमें एक ओर राजा का नाम, टकसाल का नाम, अंकों एवं शब्दों में तिथियाँ तथा एक ओर कलमा मिलता है। इस प्रकार के मुस्लिम शासकों के कुछ नाम उल्लेखनीय हैं जिनकी मुद्राएँ तत्कालीन मुद्राकला की सम्यक् रूप हैं—

बलवन, अलाउद्दीन खिलजी, शम्शुद्दीन अल्तमश, गयासुद्दीन तुगलक, मोहम्मद तुगलक, इस्लामशाह, मुबारकशाह, फिरोजशाह, बहलोलशाह, शेरशाह, अकबर, जहाँगीर आदि।

यहाँ विश्व के कुछ देशों की भी मुद्राएँ संग्रह की गई हैं और वे संसार की मुद्राकला तथा उसके वैविध्य को एक ही स्थान पर प्रस्तुत करती हैं। उनमें से हैं ग्रेट ब्रिटेन, इंग्लण्ड, आस्ट्रेलिया, निदरलैण्ड, न्यूजीलैण्ड, वोर्नियो, नार्वे, संघाई, फ्रांसिसी, हिन्द-चीन, साइप्रस, ईरान, अफगानिस्तान, एशियाई टर्की, फिलिस्तीन, मिश्र, जापान, चीन, जर्मनी, हंगरी, वेल्जियम, पुर्तगाल, डेनमार्क, रूस, अमेरिका, मौरिशस, फ्रांस, टर्की, आर्जन्टाइना, बिलोचिस्तान, यूनान, कनाडा, अफ्रीका, हालैण्ड, लेबनान, इण्डोचायना, कांगो, अबोसीनिया, पाकिस्तान, मलाया आदि।

इनके अतिरिक्त अनेक मुद्राएँ ऐसी भी हैं जो भारत में ब्रिटिश शासन के समय विदेशी शासकों, जैसे विक्टोरिया, एडवर्ड, जार्ज आदि ने निर्माण कराके प्रचलित की थीं। ये अधिकतर ताम्रनिर्मित हैं और अनेक मुद्राएँ बहुत साफ तथा सुन्दर दृश्यों से युक्त हैं। ये दर्शकों को भारत पर विदेशीसत्ता का स्मरण दिलाती हैं।

इन मुद्राओं के अतिरिक्त इस वीथिका में कुछ देशों के नोट भी प्रदर्शित किए गए है। यहाँ मुद्राओं तथा नोटों का यह बृहद् संग्रह, जहाँ मुद्राशास्त्र के ज्ञाताओं के लिए शोधकार्य में सहायक है, वहाँ जनसाधारण के लिए ज्ञानवर्धक और मनोरंजक भी है। संग्रहालय में संग्रहीत नोट मुख्यतया इटली, जापान, रूस, फ्रांस, हांगकांग, यूनान, स्याम, मौरिशस, अफगानिस्तान, जर्मनी, चीन, नेपाल आदि देशों के हैं।

---



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

# हरिहर-हिरण्यगर्भ

शशिकान्त पाठक एवं अनामिका पाठक
राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली

भारत में समय-समय पर विभिन्न धर्मों के मध्य धार्मिक सामंजस्य एवं सद्‌भावनाएँ बनती रही हैं, प्रतीक रूप में अनेक युग्म-प्रतिमाओं का निर्माण हुआ। हरिहर हिरण्यगर्भ शीर्षक मूर्ति ब्राह्मणधर्म के विभिन्न सम्प्रदाओं के मध्य धार्मिक सामंजस्य का भाव व्यक्त करने वाली मूर्तियों में से एक है। धार्मिक सहिष्णुता की इस विचारधारा का उद्‌भव गुप्तकालीन कला में परिलक्षित होता है। एक स्तम्भ के चारों ओर ब्रह्मा, विष्णु, शिव एवं सूर्य की मूर्तियाँ उकेरी गई हैं। ऐसी एक मूर्ति राष्ट्रीय संग्रहालय में संग्रहीत है।[1] कालान्तर में एक ही मूर्ति में इन चारों देवताओं का समावेश किया गया। ऐसी ही एक मूर्ति का वर्णन यहाँ पर किया गया है और जो राष्ट्रीय संग्रहालय में सुरक्षित है।

त्रिमुखी एवम् अष्टभुजी यह देवप्रतिमा योगासनमुद्रा में कमलासन पर असीन है (चित्र संख्या १)। चतुर्थ मुख की कल्पना पीछे की ओर की गई है। सभी शीर्ष मुकुटधारण किए हुए हैं एवं विभिन्न आभूषणों से सुसज्जित हैं। सबसे ऊपर के हाथों में चक्र एवं गदा हैं जो कि विष्णु का प्रतिनिधित्व करते हैं, इसके पश्चात् के दोनों हाथ कमलपुष्प से सुसज्जित हैं जो कि सूर्य का प्रतीक है, तीसरी जोड़ी हाथ सर्प एवं खंडित आयुध, सम्भवतः खट्वांग से युक्त हैं जो कि शिव का द्योतक हैं। सबसे नीचे के हाथ कलश एवं माला को पकड़े हुए हैं जो कि ब्रह्मा के परिचायक हैं। इन आयुधों के अतिरिक्त इन देवताओं के वाहन भी इन देवताओं की उपस्थिति का ज्ञान कराते हैं। कमलासन के ठीक नीचे दाहिनी ओर नन्दी एवं गरुड़ तथा बांयी ओर हंस एवं अश्व विद्यमान हैं। यह प्रतिमा दो अर्धस्तम्भों के मध्य बने हुए प्रकोष्ठ में उकेरी गई है। इस प्रकोष्ठ के बाहरी ओर व्याल की आकृतियाँ बनी हुई हैं। ऊपर की ओर ज्यामिती के अलंकरण से सुसज्जित शिखर हैं। इसकी पूरी वास्तुकला अपने आप में एक मन्दिर के समान है। राजस्थान की यह प्रतिमा 15वीं शती की है।

इस प्रतिमा में कलाकार ने चारों देवताओं ब्रह्मा, विष्णु, महेश एवं सूर्य का समावेश किया है, अतः यह प्रतिमा हरिहर-हिरण्यगर्भ की है। तेरहवीं शती के भुवनदेवकृत अपराजितपृच्छा में इस प्रकार की प्रतिमा को हरिहर-हिरण्यगर्भ नाम दिया गया है।[2]



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

**चतुर्वक्त्रं चाषटबाहुं चतुष्केकनिवासनम् ।**
**ऋज्वागतो मुखः कार्यः पद्महस्तो दिवाकरः ॥**
**खट्वांगत्रिशूलहस्तो रुद्रो दक्षिणातः शुभः ।**
**कमण्डलुं चाक्षसूत्रमपरे स्यात् पितामहः ॥**
**वामे तु संस्थितश्चव शंखचक्रधरो हरिः ।**

(२१३, ३२-३४)

अर्थात् हरिहर-हिरण्यगर्भ की प्रतिमा चतुर्मुखी और अष्टभुजी हो और इसमें चारों देवताओं का निवास हो, सामने की ओर सूर्य दो (प्राकृतिक) हाथों में पद्म, दाईं ओर शिव खट्वांग और त्रिशूल, बाईं ओर विष्णु शंख और चक्र तथा (पीछे की ओर) ब्रह्मा कमण्डलु और अक्षमाला धारण किए हुए चित्रित हों। त्रिमूर्ति के साथ सूर्य की एकात्मकता का उल्लेख शास्त्रों में मिलता है। मार्तण्डपुराण में सूर्य के त्रिधास्वरूप को ही ब्रह्मा, शिव एवं विष्णु का शरीर बताया गया है।[3] शरदातिलकतंत्र के एक मंत्र में भी ब्रह्मा, शिव एवं विष्णु के साथ सूर्य की एकात्मकता का उल्लेख हुआ है।[4]

**वेदत्पादं चतुर्थ्यन्तं ब्रह्माविष्णुशिवात्मकम् ।'**
**सौराय योगपीठाय नमः पद्मनन्तरम् ।**
**पीठमन्त्रोड यमाख्यातो दिनेशस्य जगत्पतेः ॥**

(१४ - ४१ - ४२)

शिव, विष्णु और ब्रह्मा से संयुक्त सूर्य की प्रतिमा का विवरण शिल्प-शास्त्रों में भी मिलता है। ऋग्वेद में भी सूर्य के संदर्भ में एक स्थल पर कहा गया है कि ऋषि आदि वस्तुतः एक ही अनन्तेश्वर को विभिन्न रूपों में देखते रहे हैं। वे अपनी दृष्टि के अनुरूप कभी इन्द्र, कभी अग्नि, कभी यम का नाम दिया करते हैं। राष्ट्रीय संग्रहालय की मूर्ति के आयुधों में शंख एवं त्रिशूल के स्थान पर गदा एवं सर्प का चित्रण है। परन्तु दोनों ही आयुध दोनों देवताओं का समानरूप से प्रतिनिधित्व करते हैं, अतः यह विविधता इसके पहचानने में कोई बाधा उत्पन्न नहीं करती है।

मध्यकाल में निर्मित युग्म-प्रतिमायें बहुतायत में मिलती हैं जिनसे तत्कालीन धार्मिक सहिष्णुता का आभास होता है। खजुराहों से इस प्रकार की छः प्रतिमायें प्राप्त हुई हैं।[5] जिनमें से चार स्थानक हैं और दो आसन पर विद्यमान हैं। खजुराहों के प्रतापेश्वर मन्दिर की जगती में जुड़ी इसी प्रकार की प्रतिमा का सुन्दर चित्रण मिलता है (चित्र-२)। इसमें देवता पद्मपीठ पर पद्मासन मुद्रा में बैठे हैं। इसके तीन मुख और आठ भुजाएँ हैं। दो हाथों में पूर्ण विकसित पद्म रहे हैं जो कि अब टूटे हुए हैं। शेष तीन दाएँ हाथों में अक्षमालायुक्त वरद-मुद्रा, चक्र और त्रिशूल धारण किए हैं। बाएँ हाथों में क्रमशः सर्प, शंख,



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

और कमण्डलु हैं। पद्मपीठ के नीचे सप्ताश्व उत्कीर्ण हैं। इस प्रतिमा एवं राष्ट्रीय संग्रहालय की प्रतिमा के आयुधों में थोड़ा-सा अन्तर है। इसमें विष्णु की गदा के स्थान पर शंख, शिव के खट्वांग के स्थान पर त्रिशूल हैं। इस मूर्ति में सूर्य को प्रमुखता दी गई है क्योंकि पद्मपीठ में नीचे सप्ताश्व उत्कीर्ण हैं। जबकि राष्ट्रीय संग्रहालय की प्रतिमा में सभी देवताओं को बराबर स्थान दिया गया है। इसी प्रकार की एक अन्य मूर्ति खजुराहों के दूलादेव मन्दिर में स्थापित हैं।[6] आयुधों एवं धारण करने के क्रम के अन्तर को क्षेत्रीय विविधता के रूप में लिया जा सकता है। गुजरात के ढेलमल स्थल में लिम्बोजी माता मन्दिर में भी इसी प्रकार की मूर्ति (चित्र संख्या ३) है, जिसमें तीन मुखवाली एवं अष्टभुजा वाली यह प्रतिमा कमलपुष्प, त्रिशूल, सर्प एवं कलश से युक्त योगासन में विद्यमान है। एक हाथ वरदमुद्रा में है तथा दो अन्य खण्डित हाथों में विष्णु के आयुध रहे होंगे।[7] इस मूर्ति में प्रस्तुत मूर्ति के समान गरुड़, हंस एवं नन्दी वाहनों के रूप में आसन के नीचे विद्यमान हैं। सूर्य के वाहन अश्व का यहाँ अभाव है किन्तु पैरों में जूते एवं कमलपुष्प सूर्य का पूर्ण आभास कराते हैं।

झाँसी जिले के चंदपुर से 10वीं शती की हरिहर-हिरण्यगर्भ की एक प्रतिमा स्थानकमुद्रा में प्राप्त हुई है।[8] सारनाथ संग्रहालय में भी एक प्रतिमा संग्रहीत हैं[9] जिसमें सूर्य को विशिष्टता मिली है जबकि राष्ट्रीय संग्रहालय की इस प्रतिमा में चारों इष्टदेवों को बराबर स्थान मिला है, यही इस प्रतिमा की विशिष्टता है।

महाराष्ट्र के चाँदा जिले के मार्कन्डा मन्दिर से प्राप्त हरिहर-हिरण्यगर्भ की मूर्ति में सप्ताश्व एवं सारथी अरुण का भी चित्रण है। विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त इन मूर्तियों के अलावा गुजरात, महाराष्ट्र[10] राजस्थान[11], मध्यप्रदेश यहाँ तक कि दक्षिण भारत में भी इस युग्मप्रतिमाओं के निर्माण की विचारधारा को बल मिला और जिसके फलस्वरूप अनेक ऐसी प्रतिमाओं का अंकन किया गया। विभिन्न धर्मों के मध्य सौहार्द की भावना फैलाने हेतु इन प्रतिमाओं के अर्चन को प्राथमिकता दी गई।

**सन्दर्भ—**


१. सी० शिवराममूर्ति; राष्ट्रीय संग्रहालय बुलेटिन अंक – ३, पृष्ठ — १-७।

२. भुवनदेव, अपराजितपृच्छा, २१३, ३२-३४; गा०ओ०सि० बड़ौदा, १९५०।

३. मार्तण्डपुराण, १०९, ७२।

४. आर्थर एवलांन, शरदातिलकतन्त्र, १४; ४१-४२, कलकत्ता, १९३३।

५. रामश्रय अवस्थी, खजुराहों की देव-प्रतिमाएँ, पृष्ठ — १७७-१८१; आगरा, १९६७।

६. उर्मिला अग्रवाल, खजुराहों स्कल्पचर्स एण्ड देयर सिगनीफिकेन्स, पृष्ठ — १०६; चित्र संख्या ७९, नई दिल्ली — १९८०।




CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

७. आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ वेस्टर्न इण्डिया, अंक— ९, आर्गकंलेक्चरल एन्टीक्यूटीस आफ नार्दन गुजरात, पृष्ठ—८८-८९।

८. एस०बी० सिंह, "एनकीटिक आईकोंनस इन उत्तर प्रदेश" ईस्ट एण्ड वेस्ट, अंक २३; न: ३-४; १९७३।

९. वही।

१०. रामश्रय अवस्थी, खजुराहों की देव-प्रतिमाएँ, १७९-१८१, आगरा, १९६७।

११. एस०आई०आई० जे०जी०, पृष्ठ—२३६, चित्र संख्या १४४।

१२. आर०सी० अग्रवाल, अदर लाइब्रेरी बुलेटिन, अंक—१८, पार्ट—३-४, पृष्ठ—२५९-६०।

अन्त में डा० शशि अस्थाना (संग्रहपाल, राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली) के सहयोग एवं प्रोत्साहन के लिए और श्री एन० शाह (फोटो आफिसर, राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली) के फोटोसहयोग हेतु आभार व्यक्त करना चाहते हैं जिनके सहयोग बिना यह शोध पूरा हो पाना कठिन था।

---



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

# संस्कृति के विविध आयाम

डा० सन्तराम वैश्य
प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, गु० कां० वि० हरिद्वार

संस्कृति मूलरूप से इतिहास का अंग है, किन्तु इसका क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। इसमें साहित्य, संगीत, कला, धर्म, दर्शन, लोकवार्ता, राजनीति, अर्थनीति आदि सभी का समावेश होता है। धर्म, साहित्य, राजनैतिक परिस्थिति तथा सामाजिक संगठन—ये चार कसौटियाँ हैं जिनसे संस्कृति के इतिहास का पता चलता है। इसमें से धर्म के अन्तर्गत दर्शन; साहित्य में भाषा; तथा सामाजिक संगठन में जाति-व्यवस्था एवं शिक्षा, कला आदि का भी समावेश हो सकता है। कला, साहित्य एवं विभिन्न संस्थाएँ, संस्कृति के कार्य हैं जो इसको परिच्छिन्न तथा मूर्तरूप देते हैं। संस्कृति मानव के सामाजिक व्यवहारों को निश्चित करती है, उनकी संस्थाओं को चलाती है, साहित्य तथा भाषा का निर्माण करती है तथा जीवन के आदर्श एवं सिद्धान्तों को प्रकाश देती है। निश्चय ही संस्कृति का धर्म, दर्शन, कला, साहित्य, संगीत इत्यादि से बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है।

**संस्कृति और साहित्य—**

संस्कृति ने ही साहित्य को जन्म दिया है। इस नाते साहित्य भी संस्कृति के विकास में अपूर्व योग देता है। साहित्य में हमें जहाँ समाज के दर्शन होते हैं वहीं उसमें परोक्षरूप से संस्कृति की भी झलक मिलती है। संस्कृति समाज की आत्मा तथा उसका व्यक्तित्व है। "संस्कृति की अभिव्यक्ति साहित्य में होती है तो साहित्य के द्वारा संस्कृति का पोषण भी होता है। साहित्य जहाँ जीवन का प्रतिनिधित्व करता है, वहाँ उसका संचालक भी है। जहाँ वह संस्कृति का चित्र खींचता है वहाँ उसे प्रेरणा भी देता है। संस्कृति के सभी सत्-तत्त्व साहित्य में संरक्षण पाते हैं, जिनका अध्ययन एवं अनुशीलन अध्येता के अन्दर विचारों को उत्तेजित करता है और परिणामतः चिन्तन का क्षेत्र उर्वर बनता है।"[1]

**संस्कृति और धर्म—**

संस्कृति का धर्म से भी बड़ा गहरा सम्बन्ध है। यद्यपि यह अपनी अभिव्यक्ति कला एवं साहित्य के माध्यम से पाती है, लेकिन इसका प्रतिबिम्ब धर्म और उपासना में



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

ही झलकता है। धर्म बहुत व्यापक शब्द है। मोटेरूप में कहना चाहें तो कह सकते हैं कि किसी वस्तु का वस्तुत्व ही उसका धर्म है। जैसे मनुष्यता ही मनुष्य का प्रकृत धर्म है। यशदेव शल्य के शब्दों में— "धर्म मानवीय अर्थ अथवा अन्वेषण के उस रूप को कह सकते हैं जो जीवन का लक्ष्य लोकोत्तर और परमचैतन्य की स्थिति की प्राप्ति को, अथवा परमचैतन्य के बोध की योग्यता की प्राप्ति को स्वीकार करता है। इस प्रकार से धर्म एक मूल्यबोध है, क्योंकि 'उत्कर्ष' इसके लिए मूल प्रत्यय है और उसका अन्वेषण या उपलब्धि इसकी मूल प्रेरणा।"[2]

धर्म और संस्कृति का आपस में कोई विरोध नहीं है। दोनों में अन्तर केवल इतना ही है कि धर्म में जहाँ श्रुतियों, स्मृतियों और पुराणग्रंथों का आधार रहता है, वहाँ संस्कृति में परम्परा का। धम देशनिरपेक्ष हैं किन्तु संस्कृति का सम्बन्ध देश से अधिक है। संस्कृति को धर्म से अलग करके न देखना ठीक नहीं है। डा० त्रिभुवनसिंह के शब्दों में—"प्रायः लोग संस्कृति को धर्म से अलग करके नहीं देख पाते और इस प्रकार वे संस्कृति के परिवेश को अत्यन्त सीमित कर देते हैं। जिस प्रकार कलाओं का उदय मानवजीवन को सुखमय बनाने के लिए समय-समय पर होता रहता है, उसी प्रकार समय-समय पर धर्म की रूपरेखा भी निश्चित होती रहती है। धर्म मानवनिर्मित है, धर्म मानव का निर्माता नहीं। कभी-कभी तो धर्म का अन्धानुकरण समाज के विकास में घातक सिद्ध होता है। इसीलिए कार्ल मार्क्स ने धर्म को अफीम की संज्ञा दी है जो लोगों को सही दिशा सोचने ही नहीं देता।"[3]

**संस्कृति और दर्शन—**

संस्कृति का दर्शन से भी बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। "संस्कृति की समग्रता की खोज करने के लिए उसके विचारसाहित्य का अनुशीलन आवश्यक होता है। दर्शन ही इस विचारसाहित्य के आगार हैं। संस्कृति की गहनता, गम्भीरता, विशालता, स्थिरता और प्राचीनता आदि विभिन्न पहलुओं का सम्यक् विश्लेषण दर्शनसाहित्य में ही निहित होता है।"[4]

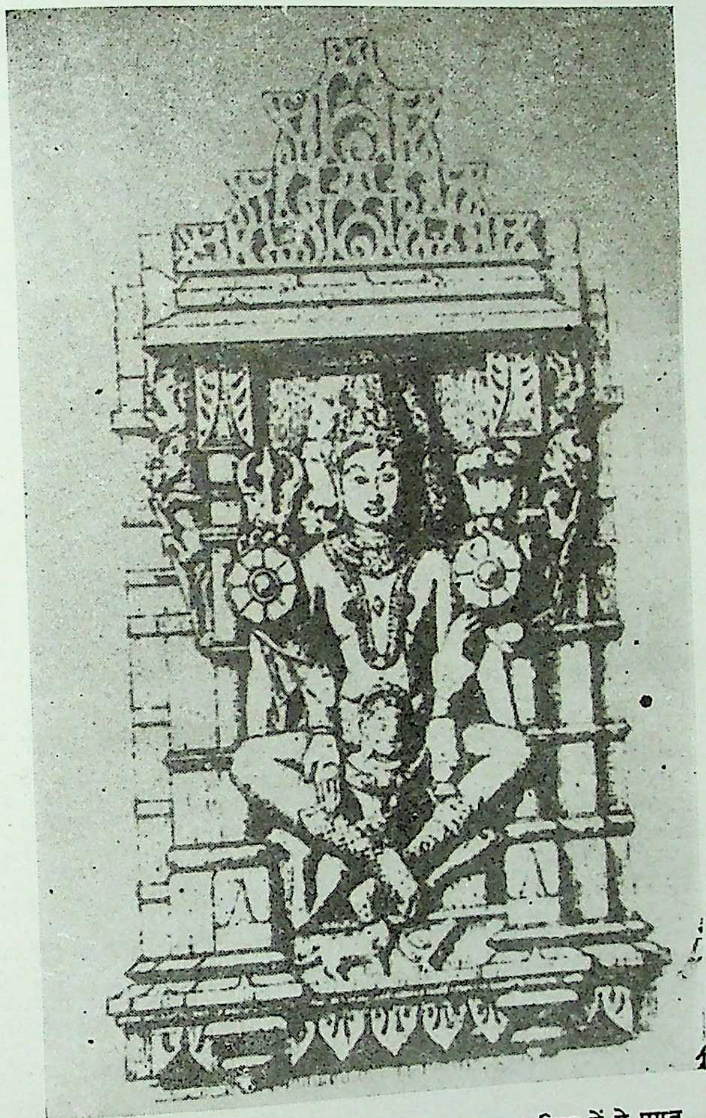
**संस्कृति और कला—**

संस्कृति का धर्म और दर्शन की तरह कला से भी गहरा सम्बन्ध है। कला वह है जो मनुष्य को मनुष्य बनाती है, उसे पशु के सामान्य धरातल से ऊपर उठाती है। इससे हमें सुख मिलता है तथा हमारे ज्ञान की वृद्धि होती है। इसके साथ ही कला से हमारी सौन्दर्यभावना में निखार भी आता है। स्थूलजीवन में संस्कृति की अभिव्यक्ति कला को जन्म देती है। इसका सम्बन्ध जीवन के मूर्त्तरूप से है। यदि संस्कृति, मन और प्राण है तो कला उसका शरीर। मानवजीवन में दोनों की उपयोगिता है। संस्कृति इसलिए



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri



**गुजरात के देलमल स्थल में लिम्बोजी माता मन्दिर में से प्राप्त हरिहर-हिरण्यगर्भ मूर्ति ।**

तीन मुख एवम् अष्टभुजा वाली यह प्रतिमा कमलपुष्प, त्रिशूल, सर्प एवम् कलश से युक्त योगासन में विद्यमान है ।

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri



हरिहर-हिरण्यगर्भ प्रतिमा—त्रिमुखी एवं अष्टभुजी यह देवप्रतिमा योगासनमुद्रा में कमलासन पर आसीन है।

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri



खजुराहों के प्रतापेश्वर मन्दिर की जगती में जुड़ी हरिहर-हिरण्यगर्भ प्रतिमा ।

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
आवश्यक है कि भविष्य में विचारों की दासता से मानव की रक्षा हो और कला इसलिए आवश्यक है कि यान्त्रिक दासता से मनुष्य अपने को बचा सके।

**संस्कृति और लोकवार्त्ता :**

लोकवार्त्ता के माध्यम से संस्कृति का स्वरूप सुरक्षित रहता है। लोकवार्त्ता का जन्म जनता के मानस में होता है। यदि इनका संग्रह किया जाए तो उस आधार पर स्थान या देश-विदेश के निवासियों की अतीत से लेकर अब तक की बौद्धिक, नैतिक, धार्मिक एवं सामाजिक अवस्था का एक सम्पूर्ण चित्र हमारे सामने उपस्थित हो जाएगा।

इन लोकवार्त्ताओं में लोकजीवन की भौतिक एवं धार्मिक चेतना का मूलस्रोत निहित रहता है। अन्ततः ये मानवसमुदायों के सांस्कृतिक दृष्टिकोण एवं जीवनमूल्यों को निर्धारित कर लोकजीवन को स्थिरता एवं स्थायित्व प्रदान करती हैं। संस्कृति के एकीकरण में इनका बहुत बड़ा हाथ होता है।

**संस्कृति और संगीत :**

संगीत के माध्यम से ही संस्कृति स्थायित्व प्राप्त करती है और साथ ही गति भी। लोकगीत, मानवहृदय के सच्चे उद्गार होते हैं। इनमें जीवन का निष्कपट अभिव्यंजन होता है। लोकगीतों के प्रत्येक शब्द में जीवन की यथार्थचेतना घुली-मिली रहती है। लोकगीत, समुदाय की भावनाओं के सच्चे प्रतीक होते हैं। ये जीवनमूल्यों पर प्रकाश डालते हैं। इनमें लोकजीवन के सुख-दुःख, माधुर्य और करुणा तथा अश्रु और हास का भावपूर्ण चित्रण रहता है। केवल प्रेम और विरह ही नहीं, जीवन के अन्य पक्षों की भी मार्मिक अभिव्यक्ति करने की क्षमता इन गीतों में होती है। इस तरह संगीत, संस्कृति के स्वरूप को सुरक्षित रखता है तथा इसे गति भी प्रदान करता है।

संस्कृति का प्रसार मात्र धर्म, दर्शन और कला तक ही सीमित नहीं है, वरन् इसका सम्बन्ध व्यक्ति, कुल, समाज, जाति तथा राष्ट्र से भी है। यह (संस्कृति) व्यक्ति, कुल, समाज, जाति तथा विश्वभर के समक्ष आदर्शों की प्रतिष्ठा करती है। ये आदर्श परम्परा में परिचालित तथा पोषित होकर अनेक पीढ़ियों तक चलते रहते हैं और आगे आने वाली संतति को प्रेरणा भी देते रहते हैं।

**सस्कृति ओर व्यक्ति :**

यद्यपि संस्कृति के निर्माण में व्यक्ति का हाथ रहता है, लेकिन वह व्यक्तिगत अथवा थोड़े से ही व्यक्तियों की वस्तु नहीं होती और न ही इसे व्यक्तिविशेष के प्रयत्न का परिणाम ही कहा जा सकता है। सच पूछा जाए तो संस्कृति, समाज के अनगिनत व्यक्तियों के



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सामूहिक प्रयत्न का परिणाम होती है और यह प्रयत्न भी ऐसा जिसे एक के बाद एक आने वाली मनुष्यों की विविध संततियाँ निरन्तर करती रहती हैं।

**संस्कृति और परिवार :**

व्यक्ति से ऊपर उठकर संस्कृति, परिवार के स्तर पर आती है। परिवार को ही मानवसंस्कृति की आरम्भिक पाठशाला कहा जाता है। परिवार में हम जिस संयम, त्याग और सेवा आदि की भावना का अभ्यास करते हैं, उसके प्रयोग की समाज में पग-पग पर जरूरत होती है।

**संस्कृति और समाज :**

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, अतः उसकी संस्कृति का विकास भी सामाजिक व सामूहिक रूप में होता है। संस्कृति ही समाज के विकास के प्रवाह का दिशानिर्धारण करती है। जब किसी समाज के अधिकाँश व्यक्ति अच्छे चरित्र और स्वभाव वाले, स्वावलम्बी परिश्रमी और एक-दूसरे के प्रति सद्भावना और सहानुभूति रखने वाले हों तो वह समाज निरन्तर उन्नति करता रहता है। इतना ही नहीं उसका नैतिकस्तर भी ऊँचा होता है। वह समाज सुसंस्कृत समाज कहलाता है। उसकी संस्कृति ऊँचे दर्जे की संस्कृति मानी जाती है।

**संस्कृति और जाति :**

जातिगत आधारों पर भी संस्कृति का वर्गीकरण होता है, जैसे—भारतीय संस्कृति, मुस्लिम संस्कृति आदि। अलग-अलग प्रदेश के निवासियों में भौगोलिकस्थिति, वातावरण तथा जलवायु आदि की भिन्नता के कारण कुछ असमानताएँ हो जाना स्वाभाविक है। यही कारण है कि विविध भूखण्डों के निवासियों में विकास की प्रवृत्ति और दिशाओं में समानता होते हुए भी कुछ भेद हो जाता है। वे अपने सामाजिक संगठन, रीति-व्यवहार, जीवन के उद्देश्य या ध्येय आदि के सम्बन्ध में अलग-अलग विचारों और धारणाओं या विश्वासों वाले हो जाते हैं। अतः एक प्रदेश के निवासियों की बहुत-सी परम्पराएँ दूसरे प्रदेश के निवासियों से अलग ढंग की हो जाती हैं। मेरी समझ में संस्कृति का इस तरह जातिगत विभाजन उचित नहीं है। मनुष्यजाति एक है, अतः उसकी संस्कृति भी एक ही है।

**संस्कृति और राष्ट्र :**

संस्कृति के विकास की अगली मंजिल राष्ट्र है। विचार और कर्म के क्षेत्र में राष्ट्र का जो सृजन है वही उसकी संस्कृति है। संस्कृति के अभ्युदय और विकास के द्वारा ही



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

राष्ट्र का अभ्युदय और विकास सम्भव है। यदि राष्ट्र को संस्कृति से अलग कर दिया जाए तो वह कबन्धमात्र रह जाएगा। संस्कृति के आलोक में ही राष्ट्र पुष्पित-पल्लवित होता है।

**संस्कृति और विश्व :**

संस्कृति का स्वरूप किसी जाति या राष्ट्रविशेष तक ही सीमित नहीं रहता अपितु वह विश्वजनीन होता है। संस्कृति ही ऐसी है जो विश्व-बन्धुत्व की भावना का विकास करती है और मानवमात्र के कल्याण का मार्ग प्रशस्त करती है। काम, क्रोध, लोभ, अहंकार, द्वेष, घृणा, स्वार्थ, घमंड, क्रूरता इत्यादि हिंसात्मक भावों को समाप्त कर इनकी जगह प्रेम, सद्भाव, सहानुभूति, सहयोग, सेवा, त्याग तथा उपकार आदि की भावना का विकास करना ही संस्कृति का उद्देश्य है।

इस तरह संस्कृति की पैंठ हमारे जीवन में बहुत गहराई तक है। यह हमारे सम्पूर्ण जीवन को आच्छादित किए हुए है, जीवन का कोई अंग इससे अछूता नहीं है। राजनीति, अर्थशास्त्र, धर्मशास्त्र, समाजशास्त्र, विज्ञानादि सभी को आत्मसात करते हुए संस्कृति एक ऐसा व्यापक एवं विस्तृत परिवेश प्रस्तुत करती है जिसमें रहकर हम अपने जीवन का सर्वांगीण विकास कर सकते हैं।

**सन्दर्भ :—**

१ – वैदिक संस्कृति और सभ्यता – डा० मुंशीराम शर्मा, पृ० १७।
२—संस्कृति : मानव कर्त्तृत्व की व्याख्या—यशदेव शल्य, पृ० ११७।
३—'शांतिनिकेतन से शिवालिक तक—सम्पा० डा० शिवप्रसाद सिंह' से उद्धृत।
४—भारतीय संस्कृति और कला—वाचस्पति गैरोला।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

# प्राचीन भारतीय युद्धनियम

डा० रामसिंह
प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

जगत के प्रारम्भिक विकास के साथ ही युद्ध की भावना मानवता के साथ जुड़ी हुई है। विकास का ऐसा कोई भी युग दृष्टिगत नहीं होता, जहाँ चेतनप्राणियों के बीच युद्ध न हुआ हो। फीचर्ड के अनुसार "युद्ध, आँधी, भूकम्प, ज्वालामुखी तथा प्रवाहित तरंग की तरह प्राकृतिक दृश्य है। अतीत, वर्तमान तथा भविष्य सभी कालों में यह तरंग लहराती दिखायी देती है।" युद्ध बर्बरता का ही चिह्न न बन जाय, इसे रोकने के लिए प्राचीनकाल से ही प्रयास होते रहे हैं। एक पक्ष जब दूसरे पक्ष से युद्धरत हो उस समय युद्धसम्बन्वी कुछ नियमों का पालन आवश्यक हो जाता है। प्राचीन काल में जब कभी दो दल किसी संधिस्थल पर एकत्रित होते थे और नियम बनाते थे तब वे ही नियम उनके लिखित युद्धनियम हो जाते थे, किन्तु उन नियमों में लोक-कल्याण का ध्यान रखा जाता था।

प्राचीनग्रन्थों का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि महाकाव्यकाल से पूर्व युद्धविषयक नियमों का विधिबद्ध उल्लेख नहीं हुआ था। भीष्मपर्व में वर्णन है कि जिस समय कुरुक्षेत्र में सोमकों सहित पाण्डवों तथा कौरवों की सेना युद्धभूमि में आई, उस समय उन लोगों ने आपसी समझौते के अनुसार युद्ध के सम्बन्ध में कुछ नियमों का निर्धारण किया और युद्धधर्म की प्रतिष्ठा स्थापित की[1]। युद्ध के उन नियमों का उल्लेख परवर्ती ग्रन्थों में भी मिलता है किन्तु समयानुसार उनमें परिवर्तन एवं परिवर्धन भी होता गया।

प्राचीनतम साहित्यिक ग्रन्थों में नीति के लिए 'नय' शब्द उल्लिखित हुआ है, जो संख्या में चार हैं—साम अर्थात् सन्धि की नीति, दान अर्थात् कुछ धन आदि देकर किसी राज्य को प्रसन्न करने की नीति, भेद अर्थात् फूट उत्पन्न करने की नीति तथा दण्ड अर्थात् युद्ध की नीति। इन नीतियों में से किसी राजा के साथ किस प्रकार की नीति का प्रयोग किया जाना चाहिए, ग्रन्थों में इसका विस्तृत उल्लेख है। महाभारत[2] के अनुसार अपने समान पराक्रम वाले राजा के साथ साम और भेद की नीति, अपने से सशक्त के साथ दान की नीति, अपने से कमजोर के साथ दण्ड की नीति का; आचार्य



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कौटिल्य[3] के अनुसार दुर्बल राजा को अधीन करने के लिए साम और दण्ड की तथा प्रबल राजा के साथ भेद की नीति का; शुक्राचार्य[4] के अनुसार सशक्त शत्रु राजा द्वारा त्रस्त राजा के साथ साम और दान की, अपने से सबल राजा के साथ साम एवं भेद की, तथा समबल वाले राजा के साथ दण्ड की नीति का प्रयोग करना चाहिए।

युद्ध प्रारम्भ होने के पूर्व सर्वप्रथम सामनीति ही प्रयुक्त होती थी। भीष्म के अनुसार चतुरंगिणी सेना एकत्र करने के बाद भी सर्वप्रथम सामनीति द्वारा ही शत्रु से संधि करने का प्रयास करना चाहिए। इस कार्य में असफलता मिलने पर ही युद्ध करना न्यायसंगत है[5]। मनुस्मृति[6] में भी सामनीति से शत्रु पर विजय करने का उल्लेख है। इस ग्रन्थ में यह स्पष्ट निर्देश दिया गया है कि पहले युद्ध द्वारा विजय प्राप्त करने की चेष्टा कदापि नहीं करनी चाहिए, क्योंकि युद्ध में दोनों पक्षों में से किसी पक्ष की विजय तथा पराजय सुनिश्चित रहती है, इसलिए युद्ध सर्वथा त्याज्य है। इसी प्रकार का वर्णन याज्ञवल्क्यस्मृति[7], कामन्दकनीतिसार[8] तथा शुक्रनीति[9] में भी मिलता है।

उपर्युक्त ग्रन्थों के इन उल्लेखों से यह स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारतीय विचारकों ने साधारणतया शस्त्रबल की अपेक्षा बुद्धिबल के प्रयोग को उचित माना है। क्योंकि युद्ध प्रारम्भ होने के पहले सामनीति का ही सर्वप्रथम उपयोग बतलाया गया है। दण्ड का प्रयोग उस स्थिति में किया जाता था, जब उपर्युक्त तीन नीतियों से विजय असम्भव प्रतीत होती थी।

यदि कोई राजा किसी अन्य राजा को अपने अधीन करना चाहता था तो उसको युद्ध करने के पहले दूत भेजकर सूचित करना पड़ता था कि या तो मेरी अधीनता या शर्त स्वीकार करो या युद्ध करने के लिए तैयार रहो। रामायण तथा महाभारत में अंगद तथा श्रीकृष्ण का दूत बनकर जाना इस बात का प्रमाण है। यह परम्परा परवर्ती-काल में भी विद्यमान रही। अजातशत्रु ने वैशाली के राजा चेटक के पास सर्वप्रथम इस संदेश के साथ दूत भेजा था कि वह राजकुमारों को मुक्त कर दे, यदि ऐसा नहीं करता तो युद्ध के लिए तैयार रहे। बुद्धचरित[10] के अनुसार भगवान बुद्ध के अस्थि-अवशेष को प्राप्त करने के लिए मल्लों के पड़ोसी अन्य सात राजाओं ने सर्वप्रथम अपना-अपना दूत भेजा था। इस कार्य में सफलता न मिलने पर ही मल्लों के विरुद्ध सैन्यअभियान प्रारम्भ किया। इसी प्रकार ब्रह्मदत्त के पुत्र बोधिसत्व ने कौसलनरेश के पास सन्देशवाहक द्वारा यह सूचना दे दी थी कि या तो राज्य दे दो अन्यथा युद्ध के लिए तैयार रहो। कौसल के राजा ने काशी के राजा के नगर के बाहरी द्वार पर पहुँचकर सूचित कर दिया था कि या तो राज्य दे दो या युद्ध करो।[11] विदेशी आक्रमणकारियों ने भी इस नीति का पालन किया। यूनानी आक्रमणकारी सिकन्दर ने भारतीय नरेश पोरस के पास अपने राजदूत के माध्यम से यह संदेश भेजा था कि वह उपहार भेंटकर अधीनता स्वीकार करे या अपनी सीमा में मेसीडोनी सेना की प्रतीक्षा



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

करे। पोरस ने दूसरी शर्त ही स्वीकार की जिसके फलस्वरूप दोनों में युद्ध हुआ[12]। इसी प्रकार कुषाणवंशी सम्राट कनिष्क ने चीनी शासक के सम्मुख प्रारंभ में राजदूत के माध्यम से सफलता प्राप्त करनी चाही थी किन्तु इस कार्य में असफल होने पर ही उसे युद्ध करना पड़ा[13]।

प्राचीन ग्रन्थों में ऐसे लोगों की सूची दी गयी है जिनका वध युद्धकाल में वर्जित था। उदाहरणार्थ महाभारत[14] के अनुसार कलाकार, घायलों की देख-भाल करने वाले, अस्वस्थ, कृषक, आदि युद्ध के प्रकोप से बचे रहते थे। भीष्म का विचार था कि जिसने अपना शस्त्र नीचे डाल दिया हो, जो भयभीत होकर भाग गया हो, जो निहत्था हो, जो वाहनविहीन हो, जो विपत्ति में पड़ गया हो, जो गिर पड़ा हो, जो कवच-रहित हो, जो 'मैं तुम्हारा हूँ' ऐसा कह रहा हो, ऐसे सैनिकों के साथ युद्ध करना न्यायोचित नहीं। धर्मसूत्रों [15] के अनुसार जो अश्व, सारथी, आयुध आदि विहीन हो, जो पीठ दिखा रहा हो, जो दूत हो, जो ब्राह्मण हो, जो हाथ जोड़ रहा हो, जिसके बाल बिखर गये हों, ऐसे व्यक्तियों पर प्रहार नहीं करना चाहिए। इसी प्रकार के अप्रहार्य लोगों की लम्बी सूची अर्थशास्त्र, मनुस्मृति, याज्ञवल्क्यस्मृति, आदि ग्रन्थों में दी गयी है।[16] दक्षिण भारतीय ग्रन्थों में भी युद्ध में अप्रहार्य लोगों के सम्बन्ध में इसी प्रकार का मिलता-जुलता रूप प्रस्तुत किया है, यथा —जो अपने बालों को संन्यासियों की तरह बांधे हुए हो, लाल तथा केसरिया वस्त्र पहने हो, जिसने अपना वस्त्र उतार दिया हो, जो संगीतज्ञ एवं नर्तक हो, आदि।

उपर्युक्त नियमों के अतिरिक्त प्राचीन मनीषियों ने युद्ध, समबल में ही होने का विधान किया था। महाभारत [18] में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि अश्वारोही सैनिकों को अश्वारोही से, गजारोही को गजारोही से, रथारोही को रथारोही से एवं पदाति को पदाति सैनिकों से युद्ध करना चाहिए। महाभाष्य [19] में उल्लेख है कि प्रत्येक योद्धा अपने ही श्रेणी के सैनिकों से युद्ध करते थे। महाकवि कालिदास [20] एवं आचार्य शुक्र [21] ने भी अपने ग्रन्थों में इन नियमों का उल्लेख किया है। तत्कालीन शिल्पकला से भी समबल में युद्ध करने के नियम की पुष्टि हो जाती है। अमरावती स्तूप के शिल्पकला के अंकन में प्रत्येक सैनिक को अपने ही समान सैनिकों से युद्ध करते हुए अंकित किया गया है।

इसी प्रकार युद्धक्षेत्र में मूर्च्छित सैनिकों पर प्रहार करना वर्जित था। राम द्वारा मूर्च्छित रावण पर तब तक प्रहार नहीं किया गया जब तक कि वह स्वस्थ होकर नए धनुष एवं अन्य शस्त्रास्त्रों के साथ पुनः युद्धक्षेत्र में नहीं आ गया। [23] महाकाव्यकालीन इस परम्परा का निर्वाह गुप्तकाल तक होता रहा, क्योंकि कालिदास ने ऐसे अनेक उदाहरण प्रस्तुत किए हैं। उदाहरणार्थ एक घुड़सवार सैनिक ने जबाबी हमला करने में असमर्थ मूर्च्छित दूसरे घुड़सवार सैनिक पर कोई प्रहार नहीं किया बल्कि उसके होश में आने की प्रतीक्षा करने लगा। [24] इसके अतिरिक्त युद्धभूमि में कांटेदार तथा



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

विष बुझे बाणों एवं कूट आयुधों का प्रयोग निषिद्ध था।[25] युद्ध के समय अपने-अपने सैनिकों को यह आदेश दिया जाता था कि वे कृषकों एवं ग्रामीणों को किसी भी प्रकार का कष्ट न दें। मेगस्थनीज ने लिखा है कि कृषकगण निश्चिन्त एवं निर्भय होकर अपना कृषिकर्म करते थे और पास-पड़ोस में भयंकर युद्ध चला करते थे। लेकिन युद्धरत सैनिक उन्हें किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं पहुँचाते थे।[26]

उपर्युक्त विवरणों से स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारतीय विद्वानों ने युद्धविषयक नियमों का निर्धारण कर एक आदर्श युद्धव्यवस्था का विधान किया था, किन्तु विचारणीय प्रश्न यह है कि इन आदर्शों का युद्धकाल में कहाँ तक निर्वाह होता था। यदि हम उन्हीं ग्रन्थों का अध्ययन करें तो ऐसे भी उदाहरण मिलते हैं जो नितान्त व्यवहारपरक हैं एवं कूटनीति तथा अधर्मयुक्त हैं। इसके कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं। महाभारत[27] के अनुसार यदि कोई शत्रु अपने घर में आसन पर बैठा हो (युद्ध न करना चाहता हो) तो भी उसे नष्ट करने में नहीं चूकना चाहिए। इस ग्रन्थ में अभिमन्यु-वध की घटना उल्लेखनीय है, जिसमें छः महारथी एक रथहीन बालक पर बाणों की वर्षा कर रहे थे। इसी प्रकार जयद्रथ-वध, द्रोणाचार्य एवं कर्ण आदि के वध इसके अनुपम उदाहरण हैं। अधर्मयुद्ध का प्रचलन परवर्ती काल में विशदरूप ग्रहण करता चला गया। चतुर्थ शताब्दी में सिकन्दर ने अश्वकों द्वारा आत्मसमर्पण के समय जो सन्धि की थी, उसके अनुसार अश्वकों की ओर से लड़ने वाले सैनिकों को किले से बाहर चले जाने की शर्त थी किन्तु सिकन्दर ने अपने वचन का उल्लंघन कर सैनिकों के दुर्ग से निकलने से पूर्व ही उन पर आक्रमण कर दिया और अधिकाँश सैनिकों की हत्या कर डाली। इसी प्रकार सिकन्दर ने क्षुद्रकों के साथ हुए युद्ध में उनकी स्त्रियों एवं बच्चों की भी निर्मम हत्या कर डाली जो यूनानियों द्वारा युद्धनियमों की अवहेलना का प्रतीक है। मुद्राराक्षस[28] के अनुसार राक्षस ने वीभत्सक को सुसुप्तावस्था में चन्द्रगुप्त के शरीर पर प्रहार करने का निर्देश दिया था जो अपने कार्य में सफल रहा और मारा गया। देवी चन्द्रगुप्तम् नाटक में दिए हुए विवरण के अनुसार चन्द्रगुप्त द्वितीय ने अपने बड़े भाई रामगुप्त की स्त्री का वेशधारण कर राजा के पास जाकर उसका वध कर डाला था। इस प्रकार के अनेक उदाहरण इतिहास के पृष्ठों में भरे पड़े हैं। आचार्य कौटिल्य[29] ने तो यहाँ तक कहा है कि मार्ग में जल न पाने वाली, धान-भूसा, ईंधन आदि से रहित, कठिन यात्रा में चलने वाली, भूख-प्यास आदि से त्रस्त, नींद लेती हुई, दुर्भिक्ष आदि से पीड़ित, सैनिक आपत्तियों से ग्रस्त शत्रु की सेना को नष्ट करने में संकोच नहीं करना चाहिए। इसी प्रकार मनुस्मृति, कामन्दकनीतिसार एवं शुक्रनीति आदि ग्रन्थों में कूटनीति एवं अधर्म युद्ध के विषय में विस्तृतरूप से उल्लेख मिलता है, यथा – शत्रु की सेना में फूट पैदा करके आक्रमण कर देना, युद्ध में श्रम से थके हुए एवं रात्रि में सो रहे सैनिकों पर, भूख-प्यास से व्याकुल, भोजन में लगी हुई, दुर्भिक्ष तथा महामारी आदि से पीड़ित शत्रुओं की सेना पर धावा बोलकर मार देना चाहिए।[30]

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि शास्त्रकारों द्वारा युद्ध के जो नियम बनाए गए थे वे



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अत्यन्त उत्तमकोटि के थे, किन्तु ये आदर्शवादी नियम सिद्धान्तपरक अधिक थे, व्यवहारपरक कम। क्योंकि जिन ग्रन्थों में एक तरफ आदर्शयुक्त नियमों का वर्णन है, वहीं दूसरी तरफ कूटनीति या अधर्मयुद्ध का अपेक्षाकृत अधिक उल्लेख है। इससे यह प्रतीत होता है कि युद्ध में शत्रुओं को पराजित करना ही युद्धमान सैनिकों का मुख्य उद्देश्य होता था। इस कार्य के लिए चाहे गर्हित कार्यों का ही आश्रम क्यों न लेना पड़े।

**सन्दर्भ ग्रन्थ :**


१. भीष्म पर्व १/२६–२६ ।
२. आदि पर्व १४०/२३–२४ ।
३. अर्थशास्त्र ७/१२१/१६ ।
४. शुक्रनीति ४/१/३८ ।
५. शान्ति पर्व १०२/१६ ।
६. मनुस्मृति ७/१६८–२०० ।
७. याज्ञवल्क्यस्मृति १/३४६ ।
८. कामन्दकनीतिसार १८/१ ।
९. बुद्धचरित १८/१ ।
१०. शुक्रनीति ४/१/३७ ।
११. असातरूपजातक, १/१०/१०० : महाशिलवजातक, १/६/५१ ।
१२. सरकार, जदुनाथ, मिलिटरी हिस्ट्री आफ इण्डिया, पृ० १५ ।
१३. चट्टोपाध्याय, बी०, कुषाण स्टेट एण्ड इण्डियन सोसाइटी, पृ० १३६ ।
१४. भीष्म पर्व १०७/७७–७८, शान्ति पर्व ९६/१५, विराट पर्व ६७/५ ।
१५. गौतम धर्मसूत्र १०/१७–१८, आपस्तम्ब २/६/१२,
बौधायन धर्मसूत्र १/१०/८–२२ ।
१३. अर्थशास्त्र १३/१७४–१७५/४, मनुस्मृति ७/९१–९३, याज्ञवल्क्यस्मृति १/३२६ ।
१७. पुरनानुरू ९, सिलप्पादिकारम् २६/२२५–३०, सिरुपंचमूलम् ४६,
पुरनानुरू ३८९ ।
१८. भीष्म पर्व ४५/८३ ।
१९. महाभाष्य ६/१/४८ ।
२०. रघुवंश ७/३७ ।
२१. शुक्रनीति ४/७/३५७–५८ ।
२२. शिवराममूर्ति, सी०, अमरावती, स्कल्पचर्स इन दि गवर्नमेन्ट म्यूजियम, मद्रास,
फलक ५६, चित्र १,२, पृष्ठ २४६ ।
२३. युद्धकाण्ड ५१/१४३ ।
२४. रघुवंश ७/४७, कुमारसंभव १६/३७ ।




CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

२५. [illegible]

२६. मजूमदार, आर० सी०, क्लासिकल एकाउन्ट्स आफ इण्डिया, पृष्ठ २३३, २६४।

२७. द्रोणपर्व ४८/३१–३३ ।

२८. मुद्राराक्षस २/१३ ।

२९. अर्थशास्त्र १०/१४८–१४९/२ ।

३०. मनुस्मृति ७/१९७, कामन्दकनीतिसार १८/६४, ६६, ६९,
शुक्रनीति ४/७/३४७–३५० ।

---



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

# राजानक अलक सूरि

डा० निगम शर्मा
अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, गु० कां० वि० हरिद्वार

ब्रह्म में सुखोपविष्ट होने से तथा विषयान्तर से विक्षेप-रहित होने से टीकाकार में सराहना की बुद्धि प्रमुदित और उदित होती है। टीका हमारी विचार-पद्धति में नवीनता और प्रखरता लाती है तथा चिन्तन के लिए उत्तेजित करती है। निर्णायक विवेक-चेतना जागृत करती है। जीवन की अँधेरी समस्याओं में टीका एक प्रेरित-ज्योति है। टीकाकार में प्रभावशाली व्यक्तित्व की कल्पना की जाती है। विवेचना-शक्ति, अर्थ-सङ्गति लगाने की ऊहा, सामाजिक एवं सामयिक-ज्ञान के लिए विशेष-बुद्धि टीकाकार की विशेषता है। कवि का अर्थगाम्भीर्य अण्डे में से प्रथम मुकुलित-शिशु-सा, सीप से झाँकते मोती-सा, सुमनायित नाभि से कस्तूरी-सा गन्धाकुल रहता है।

भाषा को वाग्देवी कहा गया है। वाग्देवी की स्तुति में ऋचाओं से लेकर अब तक के ऋषियों ने मनन-सामग्री प्रस्तुत की है। समर्थ-समर्थकों ने बताया कि प्राणशक्ति सरस्वती में अनुरणन करती है और सरस्वती प्राण में प्रलीन रहती है। यह वाक् परारूप में सदा देवताओं के साथ रहती है। मानव ने चिन्तन करते-करते ऋषित्व को प्राप्त कर लिया पर इस अनादिनिधना वाक् को पूर्णरूपेण न जान सका। वृत्ति की व्यापकता हमें वाग्-ब्रह्म तक ले गयी पर 'यन्मनसा न मनुते' कह कर उपनिषद्-ऋषि ने वाग्-ब्रह्म तक पहुँच सकने में मानवीय-शक्ति को अपूर्ण कहा। पूर्णपुरुष को वाणी के ही माध्यम से जाना जा सकता है पर वह पूर्णपुरुष वाणी से उदित नहीं होता क्योंकि वाणी स्वयं उसी से उदित होती है। वाक् ही मनु है और वाक् ही सोम-तत्त्व को धारण करती है।

धन्य हैं वे मनीषी जिनके रहस्यमय वाङ्मय को समझने तथा अन्य तक पहुँचाने के लिए गुण-रसिक पारखी मिलते हैं। विवेचक के कञ्चन-मण्डित मुकुर में मूलकवि अपनी विशदता और विशालता का अवलोकन करता है। रसभरे नयन दर्पण में अधिक दमकते हैं। मानों ऐसे विदग्ध विवेचकों के हृदय को बना लेने के अनन्तर ही अवशिष्ट परमाणुओं से विधाता ने सिन्धु की अगाधता, पर्वतों की दृढ़ता तथा आकाश की विस्तीर्णता का सृजन किया।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

टीकाकार का यह परम कर्त्तव्य है कि मूल रचयिता के शब्द को भली प्रकार तोल कर बोले। उसके प्रति किसी प्रकार का अगौरव न उठने दे। कहीं ऐसा भी न हो कि शब्द कथन-मात्र बनकर उसकी टीका केवल एक पुनरुक्तिमात्र बन जाए। अतः क्रान्तदर्शी कवि के शब्द की विशेषता को परखे और व्युत्पत्ति के द्वारा उस दिव्य-दर्शन का स्पर्श करे जिसे कि मूल कवि ने अपने शब्द-दर्पण में देखा है। पूर्ण गवेषणा करके अपने से पूर्ववर्ती तद्विषयक या अन्य विषयक अर्थद्रष्टा समीक्षकों की गूढ़दृष्टि का समाधि द्वारा अनुशीलन करे और पुनः यदि पिछले किसी आलोचक द्वारा दोष उद्‌भावित हों तो उनकी सारग्राही समीक्षा करे जैसा कि पतञ्जलि, शबर स्वामी, आचार्य शंकर, अभिनव गुप्त आदि लोक-रंजक आचार्यों ने किया है। ये आचार्य वाणी के चित्त को अंकुरित करने वाले चिन्तामणि हैं जिनके परिरमणीय आलोक में मूल ऋषि जगमगा रहे हैं। वास्तव में यदि ऐसे समीक्षक ऋषि न मिले होते तो इन अद्‌भुत प्रतिभाशाली ऋषियों को समझ पाना न केवल दुरूह हो जाता अपितु भारती रंग-मंच से बहुत-से स्वर्णिम पत्र तथा पात्र अदृश्य हो जाते। काव्यगत न्याय-बीज का निबन्धन टीकाकार की चातुरी है। कवि कभी-कभी प्रमादवश बहक जाता है पर टीकाकार को तत्काल उसकी प्रवृत्ति आँक लेनी चाहिए। 'न चेदानीमाचार्याः सूत्राणि कृत्वा निवर्तयन्ति' कह कर आप उसे क्षमा भले ही कर दें पर आपकी दृष्टि से वह दोष ओझल नहीं रहना चाहिए क्योंकि कहीं-कहीं ऋषि के प्रमाद में भी भारती की भव्यता शकुन्तला के रूप में अन्तर्निहित ही रहती है। अतएव शङ्कित, सम्भावित एवं समारोपित प्रश्नों का समाधान भी प्रतिभोन्मेष के साथ आवश्यक है जिससे कि मूल कवि के प्रति अगौरव का परिहार हो तथा गौरव-प्रतिपादन की विशिष्टता कमनीयता के साथ झलके।

सूर्य एवं चन्द्र की प्रभा से भास्वर रत्न-दीपिका के समान, मणिमय-टीका के समान उच्च कवि की टीका अन्तराल के निगूढार्थ को प्रकाशित करती हुई काव्य-मन्दिर को आनन्दित करती है। भगीरथ-प्रयत्न से साध्य सच्ची टीका गङ्गा के समान ही जाड्य-मल का प्रक्षालन करती है। अतएव स्पष्ट-स्थलों पर कोश-व्युत्पत्ति आदि का बल-प्रदर्शन टीकाकार को नहीं करना चाहिए। गम्भीर-स्थलों पर अर्थाविष्कार की ओर पूर्ण प्रयास करके मार्मिक-दृष्टि की उद्‌भावना करनी चाहिए। यदि कहीं कूट-स्थल हों तो वहाँ पर अपने प्रतिभान का लम्बोदर-कौशल दिखाना चाहिए पर ऐसी उद्‌भावना नहीं करनी चाहिए जो कि मूल कवि को इष्ट न हो।

टीका गहन-विषय को स्पष्ट करने के लिए लिखी जाती है अतः उसे सरल, सुपाठ्य एवं सुपाच्य बनाना चाहिए। उद्योतकर ने 'न्याय-वार्तिक' टीका लिखी। वाचस्पति मिश्र ने इसको स्पष्ट करने तथा विपक्षियों के समाधान के लिए 'न्याय-वार्तिक-तात्पर्य-टीका' लिखी। वह भी इतनी दुरूह हो गयी कि आचार्य उदयन ने इस पर 'परिशुद्धि' टीका लिखी।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

आचार्य नीतिनेत्र का श्लोक है—

**यः स्याद् भुजगवद्भूपो बहिरीक्षित मोहितः ।**
**तं खादन्ति न किं नाम लञ्जिका इव सेवकाः ।।**

यहाँ पर 'लञ्जिका' शब्द विचारणीय है। 'लञ्जिशोभायाम्' परार्थमात्मानं शोभयन्ति याः, ता वेश्याः। लञ्जिका वेश्या को कहते हैं जो अन्य पुरुषों के लिए अपने को सजाती है। जब लञ्जिका का अर्थ स्पष्ट हो गया तब भुजग का अर्थ भी खुल गया। अर्थात् वे मदिरापान करने वाले विलासी जो कि वेश्याओं के यहाँ सर्प की भाँति मद में पड़े रहते हैं। आचार्य नीतिनेत्र का कहना है कि यदि राजा विलास-प्रिय हो जाए और आलोक-मात्र मधुर रूप-रस के लिए मोहित होने लगे तो उसे सेवक लोग उसी प्रकार खा जाते हैं जिस प्रकार कि विलासी धनी पुरुषों को वेश्या।

राजानक अलक सूरि उद्भट विद्वान् थे। इन्होंने अपने जन्म से कश्मीर की कुंकुम-भूमि को सुरभित किया था। इनका समय राजाधिराज पृथ्वीराज के जीवन का उत्तरवर्ती काल है जबकि भारत की सस्य-श्यामला मंगलमयी भूमि को विदेशी घोड़े रौंद रहे थे।

राजानक अलक सूरि के पिता का शुभ नाम राजानक जयानक सूरि था। श्री जयानक अपने समय के उच्चकोटि के कवि और कोमल-कल्पना के जागरूक द्रष्टा थे। इन्होंने पृथ्वीराज विजय महाकाव्य के रूप में संस्कृत-वाङ्मय को एक अनुपम श्रेय दिया है। महान् समीक्षक जोनराज ने इस महाकाव्य पर टीका लिख कर उसकी प्रभुता एवं गौरव का उद्गान गाया है। काव्य और टीका की परम्परा में यह दोनों उज्ज्वल कृतियाँ हैं।

श्री जयानक, सरस्वती की तुलना नदी से करते हैं—

**कवित्व पाण्डित्य तटद्वयेन सरस्वती सिन्धुरिव प्रवृत्ता ।**
**एकत्र पीयूषमयो रसोऽयमन्यत्र मात्सर्त विषात्मकोऽस्याः ।।**

(१–११)

महाकवि जयानक का कहना है कि सहस्र दृष्टि पाने पर भी इन्द्र जिस रहस्य को नहीं देख पाते, उसे क्रान्तदर्शी कवि ही देख सकता है।

**दृशां सहस्रेण न वीक्षते यद् वागीश शिष्टो विबुधाधिराजः ।**
**तमद्वितीयैव कवे र्विवेक्तुं दृष्टि र्भवत्यत्यधिकाधिकारा ।।**

(१–१३)



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

सज्जन कभी-कभी प्रमाद कर जाता है पर दुर्जन अपना स्वभाव नहीं छोड़ता—

**साधुः प्रमादात्त्यजति स्वभावं खलस्तु नारोहति साधुभावम् ।**
**निर्गन्धतामेति हि चन्दनादि न सौरभं संघटते रसोने ।।**

(१–२३)

इस पृथ्वीराज महाकाव्य के अवगाहन से पता चलता है कि कवि जयानक महाराज पृथ्वीराज की सभा के पण्डित थे और इन्द्रप्रस्थ में बहुत दिनों तक निवास ही नहीं किया था अपितु श्री पृथ्वीराज के प्रिय मित्रों में भी उनकी गणना थी। इनका पूर्ण काव्य अतीव सरस, सूक्तिसुधा से सिक्त, नाना रसों एवम् अलङ्कारों से परिपुष्ट श्री भारवि एवं माघ की परम्परा का अद्वितीय महाकाव्य है। यद्यपि यह महाकाव्य पूर्ण उपलब्ध नहीं होता पर जितना उपलब्ध है उसके अनुशीलन से पता चलता है कि इसका कवि अवश्य ही काश्मीर की कुंकुम-कल्पना से एक नवीन कल्पवृक्ष उगा गया है।

तिलोत्तमा धरणी पर द्युनदी (गंगा) के समान अवतीर्ण हुई है। भला गंगा बहुवाहिनी-पति (सेनाओं के पति पृथ्वीराज, नदियों के पति सागर) के अतिरिक्त कहाँ विश्राम पा सकती है ?

**तदवश्यमसौ तिलोत्तमा द्युनदीवावततार भूतलम् ।**
**अचिरादपि पत्युरेकतामुपयाता बहुवाहिनीपतेः ।।**

(१२–३८)

राजा की आँखें, कान और हृदय (पाँचों) एक साथ ही विकसित हो गये। पंचशर ने भी अपने को धन्य माना—

**नयने श्रवणे मनश्चयत्सममेव व्यकसन्महीपतेः ।**
**विपुलीकृत लक्ष्यपंचकः सुकृती पंचशरस्ततोऽभवत् ।।**

(१३–३)

रसोज्ज्वल कवि एवम् अर्थद्रष्टा युग-पुरुष के रूप में जयानक कवि जैसे पुण्यकाम पिता को पाकर राजानक अलक सूरि अवश्य ही पितृमान् कहे जायेंगे। भला जिस घर में स्वयं सरस्वती निवास एवं विलास भरती हो, उस घर की शोभा और ज्ञान-समृद्धि के बारे में क्या कहा जा सकता है ? जितना कहा जाय, उतना ही अल्प है। इससे अनुमान किया जा सकता है कि राजानक अलक सूरि का बचपन साक्षात् हितरमणीय पाणि-पल्लव की केसरछाया में पल्लवित हुआ था।

वाग्देवतावतार मम्मट सम्भवतः तब अपने जीवन के बृद्धत्वकाल में पहुँच चुके



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

होंगे। उव्वट ने अपने वेद-भाष्य को पूरा कर लिया था। धनपाल की 'तिलक मंजरी' अपनी कीर्ति-सुरभि से लोगों को पुलकित कर रही थी। राजा भोज का सरस्वती कंठाभरण जगमगा रहा था। विल्हण का विक्रमाङ्कदेव चरित सहृदयों के लिए कविता–निकष बन चुका था। भट्ट कैयट अपने प्रदीप के द्वारा महाभाष्य के गहन-अन्तराल तक पहुँचने में दत्तचित्त थे। रुय्यक ने अपने अलङ्कार सर्वस्व के द्वारा अपूर्व कीर्ति अर्जित कर ली थी। जयापीड राजा के सभा-पंडित भट्टोद्भट का नाम विस्तृत हो चुका था। महिम भट्ट का व्यक्ति-विवेक भी विद्वत्समाज में नये ढंग से चर्चा का विषय बन चुका था। भारत में पहुँचे हुए यवन भविष्य में चमकने वाले अमीर खुसरो के लिए मार्ग प्रशस्त कर रहे थे। गंगा के पावन-वातावरण में भीषण–उन्माद एवं रक्तपात का ताण्डव बख्तियार खिलजी खेल रहा था। लाखों सरस्वती के उपासक इस तलवार-ताण्डव में बलि चढ़ रहे थे।

इसी बेला में सरस्वती का दुग्धमुख, मुग्धकवि, युग-प्राण भारत-पुत्रों को 'पृथ्वीराज विजय' महाकाव्य के माध्यम से उभय-तंत्र का मंत्र दे गया—

**भाषादोषवशाद् गिरां बलरजः स्तोमं दिशामम्भसा—**
**मक्ष्णां भानुरुचां च दुष्कृतभरद्यावापृथिव्योरपि।**
**काठिन्यात्कुलिशस्य मारकफलासङ्गादिषूणां वधाद्—**
**धेनूनां च धरण्योरधि दशधा तथ्याभिधं गोरिभिः।**

(१०–४९)

ऐसी तलवारों की झन्झनाहट में काश्मीर की घाटी नन्दन-वन के सुरम्य पुष्पों से प्रकृति को सजा रही थी। राजानक अलक सूरि अपने आदर्श पिता के पद-चिन्हों पर चलते हुए अपने चिन्तन-चिन्तामणि को स्यमन्तक स्पर्श देकर पुलकित-प्रसन्न कर रहे थे।

राजानक जयानक अपने साधित वेश में बहुत ही भव्य लगते थे। प्रथम बार सधे हुए शिरोवेष्टन से अलङ्कृत, भावमयी, प्रभावमयी इस दिव्य प्रतिभा को देखते ही पृथ्वीराज का मन परिचय के लिए विकल हो उठा—

**इदमन्यपरं जगौ कवितां कश्च पपाठ चात्र कः।**
**कतमश्च विपश्चिदेष यो निविडोष्णीषदुरीक्ष्यकुन्तलः।**

(१२–४९)

**पृथ्वीभटमुक्तवन्तमित्यवदन्मानधरो महत्तमः।**
**मिहिरोऽन्यगुणप्रकाशने परदोषावरणे महत्तमः॥**

(१२–६२)



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

विबुधः सुकविश्च शारदा मधवन्मंगल मण्डलादयम् ।
निगमागमतीर्थतापसः प्रथमोऽद्यागतवाञ्जयानकः ।।

(१२–६३)

राजानक अलक सूरि अपने पिता के समान शिर पर पगड़ी बाँधते थे या नहीं, यह तो नहीं कहा जा सकता पर इतना तो कहा ही जा सकता है कि यह राजानक-वंश सरस्वती के कण्ठ का हार था जिसमें अनेक मोती और मणि के तुल्य रत्न थे।

राजानक श्री रत्नाकर को भारती के उपासक भूले-से प्रतीत हो रहे हैं। इनके अत्यन्त उदात्त 'हर-विजय' महाकाव्य की प्रभास्वर–टीका लिख कर अलक सूरि ने अपने जिस विद्या-वैभव का परिचय दिया है, वह अद्‌भुत है। महाकवि रत्नाकर अपने 'हर विजय' महाकाव्य की प्रशंसा करते हुए स्वयं कहते हैं—

'अपि शिशुरकविः कविः प्रभावाद्—
भवति कविश्च महाकविः क्रमेण ।।

निश्चय ही जब अलक सूरि ने इस अवदात चन्दनवन में रत्नाकर की सरस्वती को वीणा–विलास करते देखा होगा तो इस नन्दन–मनोहारी दृश्य ने उनके हृदय को रसना-सनाथ कर दिया होगा। रत्नाकर को कुछ आलोचकों ने चार समुद्रों से आगे पाँचवाँ रत्नाकर माना है और उनका यह मानना उपयुक्त भी है क्योंकि यह महाकाव्य सूक्तियों का रत्नाकर ही है।

श्री अलक सूरि की इस 'विषमपदोद्योत' टीका का अनुशीलन करने से पता चलता है कि अलक सूरि व्याकरण-शास्त्र के निष्णात पारदृश्वा थे। इन्होंने अपनी टीका में स्थान-स्थान पर दुरूह शास्त्रार्थ खड़ा करके अपने बुद्धिवैशारद्य का अनुपम परिचय दिया है। ये अलङ्कारशास्त्र के धुरीण आचार्य तो थे ही निरुक्त-शास्त्र का भी तलावगाहन किया था। योगविषयक इनकी दृष्टि समाधिसिद्ध थी, वेदान्त के पावन-रहस्यों में ब्रह्म-रस का पान करने वाले, प्रकृति-पुरुष के विवेक में पूर्ण सांख्याचार्य तथा न्याय-शास्त्र के धुरन्धर मनीषी थे। इन्होंने भरतमुनि के नाट्य-शास्त्र में जो निष्ठा एवं प्रतिष्ठा प्राप्त की थी, उससे पता चलता है कि आज़कल के नाट्याचार्यों के यही अग्रिम आचार्य थे।

विविध दीक्षा-व्रतों से वाग्देवतावतार राजानक मम्मट ने अपने सकल मल-पटल को स्वच्छ कर दिया। अपने चिदानन्द स्वरूप को प्राप्त करके अलङ्कार-शास्त्र के कानन-यात्रियों को काव्य-प्रकाश दे दिया पर 'काव्य प्रकाश' जरासंघ के शरीर जैसा दुर्घट हो गया क्योंकि आचार्य मम्मट के रस-सिद्ध कर-स्पर्श का सौभाग्य जाता रहा।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

राजानक अलक सूरि रसायनाचार्य बनकर आए और मम्मट के इस सुरभित आम्र–शिशु पर अपनी 'कलम' चढ़ा दी। अब यह 'काव्य-प्रकाश' एक 'कलमी-आम-सा' सुस्वादु देकर एक युग-वृक्ष बन गया है। यह महान् मालिक (माली) अलक सूरि का कार्य है। इस महान् उपकारी ने कहीं भी अपना नाम नहीं जोड़ा, कहीं भी मम्मट का मार्ग नहीं छोड़ा। अपने भाव-गर्भी रहस्य को दूध-पय-मिश्रण से सुरस कर दिया। ऐसा तपःसिद्ध, ऐसा निर्मम टीकाकार; जहाँ आवश्यकता पड़ी मम्मट जैसी कारिका और वृत्ति बना दी तथा तदनुरूप ही उदाहरणों से काव्यप्रकाश की भव्य प्रतिमा को सजा दिया। किसी को यह पता ही नहीं चलने दिया कि यह मूर्ति जुड़ी हुई है और इसके निर्माता दो शिल्पी हैं।

अलक सूरि की इस रचना-विदग्धता से एक ओर तो यह पता चलता है कि इनके हृदय में कितना सौष्ठव था, साथ ही श्री मम्मट के प्रति कितनी गहरी इनकी आस्था थी। युग-युग जिओ महापुरुष ! हमारे नितान्त तमोमय हृदय में दीपदान करते रहो।

यद्यपि भाषा की सम्पन्नता के लिए व्याकरण-शास्त्र बहुत ही उपयोगी है फिर भी काव्य-करण एवं समीक्षा के लिए अलंकार-शास्त्र में नैपुण्य अवश्य आना चाहिए। इस चारुता के ही कारण शब्दार्थ-सम्बन्ध को काव्य-पद से निर्वाहित किया गया है।

राजानक अलक सूरि इस दृष्टि से परम-मर्म तक पहुँचे हुए समीक्षक हैं। 'हर-विजय' के मंगल-श्लोक को ही लें—

**कण्ठश्रियं कुवलयस्तबकाभिराम—**
**दामानुकारि विकटच्छविकालकूटाम्।**
**बिभ्रत्सुखानि दिशतादुपहारपीत—**
**धूपोत्थधूममलिनामिव धूर्जटि र्वः॥**

(१–१)

यहाँ पर इनकी टीका है—सुखानि श्रेयांसि वितरतु। सुखानि शोभनानि स्वकार्य-क्षमाणि अविषयापवर्तीनि खानि इन्द्रियाणि दिशतात् सम्पादयतु। कुवलयस्तबकै र्नीलोत्पल-गुच्छैरभिरामं चारु यद् दाम स्रग्दाम तत्तुल्यो विकटच्छविर्विह्लकान्तिः। उपहारेषु पूजासमयेषु भक्तजनदयया पीतो यो धूपधूमस्तेन मलिनामित्युत्प्रेक्षा। कण्ठश्रियम्। कुवलये भूमण्डले ये स्तवकाः स्तोतारस्तेषामभिरामस्याभिलषितस्य दामा दाता। स्तवका इत्यत्र स्तौतीति स्तवोऽजन्तः। स्तव एव स्तवकः। अनुकारि विकटच्छविकालकूटां स्रग्दाम तत्तुल्यो विकटच्छविर्विह्लकान्तिः। कालकूटो विषं यस्या—स्तथाविधां कण्ठश्रियंधारयन्। कीदृशीं कण्ठश्रियम् ? अनुकाः शृंगारिणः, तेषामरिः कामः, तथा विकटच्छविः भीषणकान्ति र्यः कालः, तयोः कूटां दाहिकाम्। उपहारं हारसमीपे यः पीतः कपिशोधूपः संतापोऽर्थाद्—हारोरगफूत्कृताग्निसम्बन्धी तदुत्थेन धूमेनेव मलिनाम्।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

इस प्रकार टीका के प्रारम्भ में ही श्री अलक सूरि ने अपनी नवनवोन्मेषशालिनी बुद्धि-विभूति का रसाधारण होते हुए भी असाधारण परिचय दिया है।

अर्थ — साधुत्व को ही दृष्टि में रखकर कवि तदनुरूप सिद्धशब्दों का अनुप्रयोग करते हैं। यहाँ पर टीकाकार को उस साधुत्व का प्रज्ञापन देना होता है जो कि उसके अन्तराल में सीप में मोती-सा चमक रहा है। निरन्तर ऐसा अध्यवसाय करने पर उस मानव टीकाकार का भी हृदय परिमार्जित एवं समृद्ध हो जाता है। क्षुधित व्यक्ति के लिए भोजन की भाँति अर्थोपासना तथा विविध-विज्ञान की प्राप्ति के लिए सतत उत्कण्ठित रहने वाले श्री अलक सूरि के सम्बन्ध में यह कहना नितान्त आवश्यक है क्योंकि इनकी टीका के अनुशीलन से एक अच्छी टीका के लिए सम्भावित गुणों की प्राप्ति होती है और आदर्शभूत टीका के लिए प्रामाणिक आधार प्रस्तुत होता है।

श्री अलक सूरि की ग्रहण-बुद्धि के मर्म का प्रामाणिक आधार निम्न उदाहरणों से स्पष्ट हो जाता है :

**आश्रित्य शीतरुचिना सकलेन जाति—**
**सामान्य मुत्थितवता नयनान्महर्षेः ।**
**आनन्द भार भरमन्थरता व्यधायि**
**तत्पक्षपातरभसादिव लोचनानाम् ।।**

(२०–२७, हरविजय)

अर्थात्, जातिरूपं सामान्यं समानो धर्मः। गुणक्रियासामान्ययोरपि सम्भवादुभयपदप्रयोगः। अत्रिनेत्रादुद्गतः शशी न तस्यैव सुतत्वादानन्दकरः, अपितु नेत्रजातिमिवाश्रित्य सर्वमेव नयनजातमावर्जयत्।

**अविपन्न विभाव सूचितत्त्वं**
**दधदुद्दीपित मीनकेतु चक्षुः ।**
**श्रियमापदमुष्य चित्रभेद**
**स्फुट शृंगाररस प्रबन्धकल्पम् ।।**

(१५–४६)

विभावसुरग्निः। तस्या विपन्नस्य स्फीतस्योचितत्त्वम्। बिभ्रत्। उद्दीपितः ज्वलितः कामो येन। अतश्च बहुभिः संभोगप्रथमाभिलाष विप्रलम्भादिभि र्भेदैः प्रसिद्धस्य शृंगाराख्यस्य रसस्य यः प्रबन्धो नाटकादौ निवेशनं तत्सदृशम्। वध्यमानोऽपिशृंगारः सन्निहितै र्विभावैरालम्बनोद्दीपनरूपैः कारणैः सूचितत्त्वं प्रकटतां धत्ते। यदुक्तम्—



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

'विभावानुभाव व्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः' उद्दीपितश्च समेधितः कामो येन ।

आशा प्लाति स्वच्छ लावण्यकान्ति
ज्योत्स्नापूरावह्नुतान्यप्यशेषम् ।
छत्राण्युच्चै धार्यमाणानि तासां
हैमैः पाण्डून्यन्वमीयन्त दण्डैः ॥
(१८–२)

अर्थात्, लावण्य सहिता कान्तिः लावण्यकान्तिः । हैमैः स्वर्णमयै विकारैः 'प्राणिरजतादिभ्योऽञ्' ५–३–१५४ । हेमशब्दो रजतादिषु न पठ्यते, इति चेत् तर्हितन्नापठितोऽप्युपसंख्येयः । हेमशब्दस्य बहुधा शिष्टप्रयोगदर्शनात् । दृश्यते यथा जातिषु त्रिफला शब्दः । श्रणि तु 'अन्' ६–४–१६७ । इति प्रकृतिभावे हैमनै रिति स्यात् ।

मुष्णन्तं जीवितधनं स व्यंसकुसुमालकम् ।
जघान भर्त्ता देहार्धं सव्यं सकुसुमालकम् ॥
(४३–२२२)

अर्थात्, जीवितव्यमेव धनं मुष्णन्तं रिपुं स भगवान् जघान । विचित्रा अंसकौ स्कन्धभुवि शोभमाना माला यस्य । सकुसुमा श्चालका श्चूर्णकुन्तला यस्य तादृशं सव्यं वामं देहार्धं मर्ता धारयिता ।

गरागारोरगोग्रोरा गौरीरागी गुरु गिराम् ।
गौरागुरुगिरीरागो गौररे गुरुरोगरुक् ॥
(४३–२३८)

अर्थात्, गरस्य विषस्यागाराणि गृहाणि ये उरगोस्तैरुग्रमुरो वक्षो मध्यभागो यस्य । गौर्या रागी व्यसनी वत्सलश्च । गौराः शुभ्रा अगुरवः तरुभेदाः, यासां तथा विधा गिरीराः पर्वतभुवः गच्छति श्रयति यः । अरे=गौः वज्र इव । हिमवां स्तु द्विषो गौः, तत्र पलाय्यांवस्थानास्पदम् । गुरून् महतो भक्तानां रोगान् रुजति यः ।

यो भाति प्रत्ययोत्कर्षादक्षयज्ञानलाभया ।
हृषा च सरुषा ध्वस्त दक्षयज्ञानलाभया ॥
(४३–२४०)

अर्थात्, अक्षयो ज्ञानलाभो यस्याः । ध्वस्ता दक्षयज्ञेऽनलस्याभा यया ।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

दुर्भेद्यया चमूस्तस्य माययावसितोषिता ।
रणे शौर्यगृहे क्रौर्यमाययावसि तोषिता ॥
(४३–२४२)

अर्थात्, माययाऽवसिता ज्ञाता रणे चोषिता तच्चमूः क्रूरतामाययौ । असिभिस्तोषिता ह्लादिता ॥

अर्थात्, नैर्गुण्यमकिंचित्करत्वमाश्रयतो गजस्य केनचिद्वीरेण अदन्तता प्रत्यज्ञायि। दन्तशून्योऽयमिति प्रतिज्ञा कृता । अन्यथा कथं युद्धयेत् ? पिबे रिव । यथा पिबादेशस्य लक्ष्ये गुणाभावं भजतोऽदन्तता अकारान्तता पाणिनिना प्रतिज्ञाता। अन्यथा हि लघूपधत्वाद् गुणः स्यात् —

प्रत्यज्ञायि प्रसरता वीरेणाजावदन्तता ।
नैर्गुण्यमाशुभजतः पिबे रिव विषाणिनः ॥
(४३–१०)

अभावि रभसान्नाक स्त्रिया मानवतां तया ।
रणधूल्या दधे तस्या स्त्रियामा नवतान्तया ॥
(४३–१३)

अर्थात्, मानवतां शूराणां रभसोऽभिलाष स्तस्मात्तया नाकस्त्रिया भावितम् । श्रितोत्कण्ठितया स्थितम् । ल्यब्लोपे पंचमी । तस्याश्च तदभिसरणोद्यताया रणधूल्या त्रियामा रात्रिरादधे । कृता । तयेति वा हेतुतृतीया। अहमनया वृतोऽहमनया वृत इति यस्तद्धेतुक स्तेषां रणस्तद्धूल्योत्यर्थः । नवेन स्तुत्या तान्तया खिन्नया शूराणां पुनः पुनश्चाटुकरणात् ।

उपसर्गा इव गताः क्रियायोगेन शून्यताम् ।
आसं स्तस्य हता बाणैरप्राप्तगतिसंज्ञकाः ॥
(४३–४६)

अर्थात्, तस्य बाणैराहता दैत्या अप्राप्ता गति र्गमनं संज्ञा च चेतना यैः क्रियायोगेण च शून्यतां गताः । निर्व्यापारा आसन् । उपसर्गाः प्रादय इव। ते हि क्रियायोगमन्तरेण गति संज्ञां न प्रतिलभन्ते । 'उपसर्गाः क्रियायोगे' १–४–५९ । 'गतिश्च' १–४–६० । इति वचनात् ।

रणसिन्धुं सुमनसां तदानीमुत्तितीर्षताम् ।
सारित्रासकृदुत्कृष्टकर्णान्ता नौरिवाभवत् ॥
(४३–६२)



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

अर्थात्, देवानां नौरिव सा देवी अभवत्। तयैव तेषां ततो निस्तारित्वात्। अरित्रासकृत् अरीणां भयजननी। अरित्रस्य च केनिपातनस्यासकृत् क्षेपकरणं यस्याम्।

नाभाच्छ्रुतिरिवाहीना सदोंकारतया न या।
अगाहि भर्त्तुः संग्रामसदोऽङ्कारतया नया॥
(४३–५३)

अर्थात्, भर्तुः शिवस्याङ्के आरतया क्रीडितयाऽनया संग्रामसदोऽगाहि। विलोडितम्। या श्रुतिरिव न नाभात्। अपितु शुशुभे एव। श्रुति र्वेदः। सदोंकारो रणप्रवेशसमये पाठकाले यस्य तद्भावेन अहीना सहिता।

नतलोकहितक्रिया समाना
नवमा यस्य तितांसतां सदस्त्रः।
युधि शक्तिमसौ द्विषां स्म हतुं–
नवमायस्यति तां सतां सदस्त्रः॥
(४६–९)

अर्थात्, यस्य विभो र्नतं लोकं प्रति हितक्रिया असमाना लोकातीता, अनवमा च सर्वोत्कृष्टा। असौ युधि शक्तिं तितांसतां विस्तारयितुमिच्छतां सतामरीणां तां शक्तिमुपहतुं नवं कृत्वा आयस्यतिस्म सप्रयत्नोऽभूत्। सदस्त्रः शोभनायुधः। सदांसि च सभास्त्रायते रक्षति यः।

स सेनया जगन्मनोमृदुर्वशीकया जितः।
अविस्खलं स्तदा रुषामृदु र्वशी कया जितः॥
(४६–५३)

अर्थात्, जगतां मनः प्रमाथिनी उर्वशी यत्र तादृश्या सेनया कुमारः कया जितः? न कयाचित्। रुषा कोपेन अमृदुः क्रूरः। वशी जितेन्द्रियः। आजितः समरे। आद्यादित्वात्तसिः।

मणि शतकर भासुरांगनानां दितिज चमूघट मान संसदं सः।
अकृत च समरं सुराङ्गनानामतनु दधच्छुचि मानसं सदंसः॥
(४६–५७)

अर्थात्, स हरि र्दितिजानां चमूभि र्युज्यमाना संसदा सभा यत्र तादृशं समरं धारयन्नप्सरसां मानसमतनुं कृत्वा शुचि प्रीत्या विशदमकरोत्॥



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

जेता वेगां स्तीव्रभा वायवीयान्
वृत्राराते र्बद्धभावा यवीयान् ।
श्रुत्वा हृष्यत्तत्र चाणूरपीडाः
प्रागकर्ताऽसौ दृप्तचाणूरपीडाः ॥
(४६–५८)

अर्थात्, वृत्रारातेरिन्द्रस्य यवीयाननुजो विष्णुरणूरपीडाः (अपि ईडाः) स्वल्पा अपि स्तुतीराकर्ण्याहृष्यत् । यतस्ताः बद्धभावाः । साकूताः । असौतु वायवीयान् वेगान् जेता वायोरपि चतुरगतिः । तीव्रभा दुस्सहस्तुतिः । चाणूराख्यस्य दैत्यस्य पीडाः प्रथममेव विधाता ॥

रणे शिवाभिरमनागमितं चकले वरम् ।
अदृयतास्थिशेषत्वं गमितं च कलेवरम् ॥
(४३–११)

अर्थात्, अमितं स्थूलं वरं चोत्कृष्टं कलेवरं शरीरं शिवाभिरमनाक् चकले संख्यातम् । 'कल शब्द संख्यानयोः' । अस्थिशेषत्वं गमितं चादृश्यत । मांसार्थितया विचारितम् ॥

स गुणै रणेष्वपि यशः पटं ततोऽमृदुवायसेषु समदं रसं गतः ।
रुचिमान् धनुर्मुखरयन् द्विषच्चमूमृद् उवाय सेषु समदं रसं गतः ॥
(४६–३३)

अर्थात्, अमृदुवायसेषु क्रूरकाकेषु रणेषु स देवो यशः पटम् उवाय । व्यूतवान् । वेञ् तन्तुसन्ताने । गुणाः शौर्यादयः, तन्तवश्च । समदो मदेन सह वर्त्तमानः । रसं गतो रणरागं प्राप्तः । असंगतोऽप्रसक्त्या अवहेलयैव सेषु सशरं च धनुश्चालयन् । अरिसेनां मृद्नाति यः ।

महाजिगोष्ठो प्रतिबद्धसौष्ठवै विदग्धलोकैरिव कर्णशालिभिः ।
तदाहवे सत्कविकाव्यपायिभि र्दधे मुखश्रीः पृतनातुरंगमैः ॥
(४६–५२)

अर्थात्, तुरगाः कर्णशालिनः सुप्रमाणकर्णत्वात् । विदग्धास्तु सदसदर्थविचारणात् । सत्कविकाभिरव्यपायिभिः सहितैः । सत्कवीनां च काव्यं पिबन्ति ये तैः ।

इसके अतिरिक्त अलक सूरि के शास्त्रीय गहन-चिन्तन के परिणामस्वरूप इनकी कुछ अपनी भी अनुभूति और मान्यता है, जो विचार-विमर्श करने योग्य और स्वीकार करने योग्य भी है। अलक सूरि कीर्ति और यश में सीमाङ्कन करते हुए कहते हैं कि दान आदि के कारण होने वाली प्रशंसा कीर्ति है और शौर्य आदि के द्वारा उत्पन्न प्रशस्ति यश



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कहलाती है (१३-४३)। कृ धातु पिबति अर्थ में भी है। मधु करोति पिबतीति मधुकृत् भ्रमरः (५-२१)। सह आरामि र्धारामि वर्तते इति सारः (५-२)। सह अरैः शृङ्गैः वर्तते इति सारः। इसी प्रकार पान-पात्र को पारी २६-५, मधु-कलश के लिए करक २६-६, कर्करी भी २६-२६, चषक के लिए कोष २६-४, मद्य-धानी के लिए आलुका, मधु-कलशी, कलिका और आवरवी भी, शरम्=पानी, शरः वाण (२२-४४)। शम्पा रशना, विद्युत् भी ५-२३, मर के लिए नड्वल, सूकर के लिए मुख-लाङ्गल, १२-४७, प्रचलाकी तथा नीलकन्धर मयूर के लिए (१३-२२), शौटीर्य मद के लिए १४-३८, हस्ती के लिए पीलु, काक के लिए मौकुलि तथा द्रोण १४-१४, नारिकेल के लिए कूर्च-केसर १२-२४, स्वामी के अनुवर्ती पुरुष के लिए धवल (धवं भर्तारं लान्ति गृह्णन्ति ते) १०-३, पान-पात्र के लिए शुक्ति ३०-४३, भ्रमर के लिए रसायु २६-१४, वन्दी के लिए मंख २८-३४, रुरु खूँटी या मृग के लिए, तुम्बरु बनिया के लिए, मल्लिका जूही के लिए, सुवर्चला सूर्यमूखी के लिए, प्रिय-सूचना देने वाले के लिए दिष्टि, भरिक के लिए विष्टि, जल के लिए कूपीट, शाखा के लिए लंका, गणिका हस्तिनी के लिए, विनम्र के लिए स्तोक, शावक के लिए पाक, विवाहिता कन्या के लिए राका, दया के लिए शूक, संक्षेप के लिए पुलाक, दीपक के लिए प्रतीक, हींग के लिए वाह्लीक, मयूर के लिए मेचक, स्थासक बुलबुले के लिए (बुद्बुद), अश्मन्तक तथा अन्तिक रसोईघर (रसवती) के लिए, गगरी के लिए उष्ट्रिका, खनित्री के लिए विशाखा, जल-निर्गमन (पनाला) को मकर-मुख, स्वभाव के लिए सर्ग, संकेत के लिए इङ्ग, सुरागृह के लिए गंजा, नपुंसक के लिए पोटा, मक्का के लिए गवेधुक, आदि शब्दप्रयोग विचारणीय हैं।

राजानक अलक सूरि के मत में अरि अदानृशील (रा दाने) को कहते हैं पर धन-हीन को भी अरि ( रै धन–रयीश ) कहते हैं । साथ ही अरी— (अरा अस्य सन्ति) चक्र को कहते हैं। सुदर्शन-चक्र के लिए प्रयोग हुआ है । सुन्दर चक्र वाले वज्रधर के अिए स्वरिः कहा गया है। अरि शत्रु को भी कहते हैं।

राजानक अलक सूरि की प्रतिभा सामयिक और अवसरप्राप्त विषय की विवेचना में बहुत ही उद्‌बुद्ध थी। उनकी गहन तथा विशद टीका के आधार पर उनके प्रभावशाली व्यक्तित्व का आभास मिलता है । विवेचना-शक्ति तथा संगति लगाने की ऊहा भी उनकी अनुपम थी । शब्दगत अर्थ की गवेषणा में गाहनिक–प्रतिभा का दिग्दर्शन मिलता है । वीर का अर्थ करते हुए वे कहते हैं— विविधम् ईरयति, विशिष्टा इरा यस्य, प्रियम्वदो मदो यस्य; इस प्रकार प्रफुल्लित-हृदय तथा सरस लेखनी से अन्वाख्यान इनकी टीका की विशेषता है। निर्दिष्ट-तथ्य की मनोहारिणी व्याख्या तो करते ही हैं साथ में मूल-कृति को श्लाघनीय मर्यादा की चोटी तक ले जाते हैं । विस्तृत-ज्ञान तथा शोधपूर्ण वैदुष्य का निदर्शन इनकी टीका में अनुबिम्बित है । प्रावीण्य, दर्शन तथा सिद्धान्त-ज्ञान के लिए आनन्दप्रद सोपान इनकी टीका के माध्यम से मिलता है। अनेक अर्थों वाले शब्दों को प्रक्रिया और प्रकरण के कारण नियंत्रित करते हैं । संयत और नियमबद्ध अनुभव की प्राप्ति के लिए अलक सूरि ऋषितुल्य पथिकृत् हैं।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

टीका का कार्य दुष्कर और प्रतिभापेक्षी है। विद्वज्जन के मानस-पटल पर दृढाङ्कन करने योग्य सामर्थ्य के कारण ही टीका को महत्त्व मिला है । इससे कवि की दृष्टि तथा प्रवृत्ति का जन-मानस से सम्पर्क मिलता है । 'वृत्ति वर्त्तनजीवने' में जीवन का अभिप्राय ही है कि स्वस्थिति योग्य उचित व्यापार हो क्योंकि 'जीव बल प्राणधारणयोः' ऐसा अनुशासन है । यह जीवन अहंकारवान् पुरुष के सामर्थ्यातिशय से ही प्राप्त होता है। इसी हेतु आक्षेपों का समाधान भी टीकाश्रित कार्य है।

एक टीकाकार के ही मर्म-विषय को लेकर गवेषणा-कार्य प्रारम्भ करते हुए हमें यह प्रेरणा-किरण साथ रखनी चाहिए कि टीका की आधार-शिला क्या हो ? विश्वास और उत्साह के साथ जिन मान्य टीकाकारों को अपने कृतित्व की उपलब्धि मिली है, उसके रहस्य तथा स्वाभिमान का भी वर्गीकरण के साथ हमें मूल्याङ्कन करना है। उन सम्भावना-ग्रन्थियों पर भी विचार करना चाहिए जिनके कारण टीका-सिद्धान्त उन्मुक्त तथा पल्लवित हुआ है।

संस्कृत की शब्द-सम्पदा विशद है, गाहनिक-बुद्धि की अभीप्सा करती है। प्रत्येक शब्द अपने अन्तराल में अनेक धातु छिपाये हुए है। कहाँ पर कौन धातु अधिक स्पष्ट है और कहाँ पर कौन धातु छिपकर अर्थ-सुषमा पर किरण का विकिरण कर रही है, यह अर्थ-द्रष्टा टीका-ऋषि से ही सम्भव है। 'काम' शब्द कामना-वाचक तथा कार्य-वाचक कैसे है ? सुषमा का अर्थ सौंदर्य से अभिन्न क्यों है ? सु+सम मिलकर सुघड़ शरीर के लिए वाचक बन कर सौंदर्याभिव्यक्ति में सहायक किस प्रकार है ? क्यों कनक का अर्थ स्वर्ण है फिर धतूरे के अर्थ को क्यों प्रकट करता है ? फिर कन्या में कौन-सा कनकत्व या धुस्तूरत्व देखा गया ?

राजनीति, धर्म, दर्शन, साहित्य, कला और लोक-जीवन की बहुमुखी समस्याओं एवं मान्यताओं के प्रति रससिद्ध कवि के समान ही टीकाकार में भी सजगता होनी चाहिए। पुस्तक को जानबूझ कर जटिल या विस्तृत नहीं करना चाहिये।

संकेत में दिये गये सन्दर्भ अतीव उपादेय तथा मेधावी छात्र के लिए गवेषणा के बीज बनते हैं। सम्बद्ध धरातल पर ही गवेषणा के लिए प्रारूप सम्पन्न किया जा सका है। पुरातत्त्व साहित्य एवम् अनुश्रुतियों को भी प्रसंगानुसार यथासम्भव यथास्थान समावेश अवश्य करना चाहिये। इससे विषयगत विवरण पाने में ऐतिहासिक सामग्री मिलती है। कहीं-कहीं टीकाकार मूलवृत्ति की व्याख्या करते-करते अपनी निजी सम्मति लिखने लगते हैं जो कहीं-कहीं मूल लेखक के विपरीत पड़ता है। न्यास में जिनेन्द्र बुद्धि (१ – १) कहते हैं कि मूल-वृत्ति के विपरीत व्याख्यान उचित नहीं है। अर्थ-शास्त्र के प्रणेता आचार्य चाणक्य का स्वयं ही टीका लिखने का यही अभिप्राय अनूदित होता है।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

टीकाकार व्यक्ति को चाहिये कि वह काव्य-रस को ग्रहण करने में पूर्ण समर्थ हो। वाल्मीकि रामायण में ऐसे लोगों के लिए 'काव्य-कल्पवित्' (उत्तरकाण्ड ९४–७) कहा गया है। इसका अभिप्राय यह भी निकलता है कि टीकाकार को काव्य-सौंदर्य की परीक्षा में पूर्ण सिद्ध होना चाहिये। मल्लिनाथ में इसी कारण काव्यवित् में 'वित्' शब्द को दो धातुओं से निष्पन्न माना है— विद ज्ञाने, विद-विचारणे; अतएव उन्होंने अपने अभिप्राय को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि 'काव्यं कर्तुं जानन्ति ते काव्य-रसिकाः, काव्यं विचारयितुं ये जानन्ति ते काव्य-परीक्षकाः। (एकावली—तरला टीका, भूमिका)।

शास्त्र-दीप से जिनका मार्ग आलोकित है, जिनकी बुद्धि अग्निसंशोधित स्वर्ण-श्री के समान निरन्तर उत्कर्ष को प्राप्त है। वे मानते हैं कि अगौरव के परिहार तथा गौरव के प्रतिपादन की ही दृष्टि से टीका लिखी जाती है। शंकित, संभावित, समारोपित प्रश्नों का समाधान भी अपेक्षित रहता है। कहीं-कहीं कवि की भूल पर भी तर्जनी-विक्षेप से नहीं चूकता—

**स्पृशति तिग्मरुचौ ककुभः करैं—**
**र्दयितयेव विजृम्भितमानया ।**
**अतनुमान परिग्रहया स्थितं**
**रुचिरया चिरयापि दिनश्रिया ॥**
(३–३७)

अर्थात्, कराः पाणयोऽपि। तापः खेदोऽपि। मानं दैर्घ्यमभिमानश्च चिरयायीनि दिनानि ग्रैष्मिका वासराः। अत्र तिग्मरुचेः ककुभां च कामिता प्रतीयते। लिंगविशेषोपादानात्। यथा सरले सह वासरश्रिया निभृतं क्वापि गतः स भास्करः। वद तेन विनाऽब्जिनी कथं क्षणदामद्य नताङ्गि नेष्यति। एवं दिनश्रियोऽपि नायिकात्वप्रतीतौ यथोक्तमेव संभवतीति दयितयेत्युपमानपदमपुष्टार्थ मिति सहृदयाः।

पुराने बहुत-से कोश, गुरुजन, विषयगत शास्त्र एवं परम्परा के सम्प्रदाय-शास्त्रों के माध्यम की साक्षी में अनवरत रहते हुए स्वयम् अलक सूरि भी एक प्रामाणिक आचार्य की कोटि में आते हैं। इनके सम्मत तलावगाही व्यक्तित्व के कारण पता चलता है कि नाट्य-शास्त्र, मणि-शास्त्र, दशरूपक, अलंकारशास्त्र, व्याकरणशास्त्र, निरुक्त, पिंगल, वैदिक-साहित्य एवं शिवागमशास्त्र के महारथी आचार्य थे।

महाकवि रत्नाकर ने बहुत-से अप्रचलित शब्दों द्वारा यमक-साधना में सिद्ध-श्लोकों की रचना की है। ऊपर के उद्धरणों से कहा जा सकता है कि यदि इनको अलक सूरि जैसा विवेचक नहीं मिला होता तो इनका काव्य महान् होते हुए भी दुरूह और अपरिचित हो जाता।



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

कुछ लोग अलक सूरि का नाम अल्लट सूरि लिखते हैं जैसा कि काव्यप्रकाश टीका की भूमिका में तथा परिकरालंकार के अन्त में वामनाचार्य ने भी लिखा है । हो सकता है बहुत-से काश्मीरी पंडितों का नाम टकारान्त देखकर (मम्मट, जैयट, कैयट, उव्वट, रुद्रट) इनका भी नाम अल्लट मान लिया गया हो, पर ऐसा नहीं है । 'हर विजय' महाकाव्य के प्रत्येक सर्गान्त में इन्होंने 'राजानक जयानकसूनोरलकस्य कृतौ' लिख कर अपना नाम अलक ही दिया है। आनन्द कवि ने अपनी निदर्शना टीका में भी इनका नाम अलक ही माना है—

**कृतः श्रीमम्मटाचार्यवर्यैः परिकरावधिः ।**
**प्रबन्धः पूरितः शेषो विधायालकसूरिणा ॥**

काव्यप्रकाश के अन्तिम सन्दर्भों में अलङ्कारों का क्षेत्र, सीमाङ्कन और साधक-बाधक हेतुओं से अलंकार की निश्चय-सिद्धि का जो प्रयास अलक सूरि ने किया है वह बहुत चिन्तन, समीक्षा एवं अनुभूति का परिणाम है। अलक सूरि का निष्कर्ष सान पर चढ़े मणि के समान प्रसन्न एवं रमणीय है।

---



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

# निकष पर

(पुस्तक समीक्षा)

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

पुस्तक का नाम — **पत्रकारिता के परिप्रेक्ष्य**
लेखक — **जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी**
प्रकाशक — **साहित्य संगम, १००, लूकर गंज, इलाहाबाद-२११००१**
पृष्ठ संख्या — **२२२**
मूल्य — **७५ रुपये**

'पत्रकारिता के परिप्रेक्ष्य' सुप्रसिद्ध पत्रकार तथा विचारक श्री जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी की साहित्य संगम, इलाहाबाद से ताज़ी प्रकाशित पुस्तक है। भारत सरकार ने नवप्रतिष्ठापित 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र पुरस्कार' से इस रचना को सम्मानित कर इसके महत्त्व की ओर हिन्दीजगत् का ध्यान आकृष्ट किया है। यों तो हिन्दी का पहला पत्र कलकत्ता से ३० मई १८२६ को 'उदन्त मार्तण्ड' नाम से प्रकाशित हुआ पर पश्चिमोत्तर प्रदेश से प्रकाशित पहला हिन्दी दैनिक 'बनारस' अख़बार था। प्रारम्भिक हिन्दीपत्रों की विशेषता यह थी कि इनका प्रकाशन बंगला या उर्दू के साथ हुआ अतः इनकी भाषा पर भी इन भाषाओं का प्रभाव था। हिन्दी की धज के साथ यदि कोई पत्र निकला तो १८६८ में 'भारतेन्दु का कविवचन सुधा' निकला। कविता का पत्र होते हुए भी तत्कालीन राजनीतिक और सामाजिक सन्दर्भों से जुड़ा होने के कारण यह पत्र हिन्दीक्षेत्र की समस्याओं का पूर्णरूप से प्रतिनिधित्व करता रहा। बाबू बालमुकुन्द गुप्त ने इस पत्र के सम्पादक के बारे में लिखा 'यद्यपि हाकियों में बाबू हरिश्चन्द्र की बड़ी प्रतिष्ठा थी, वह आनरेरी मजिस्ट्रेट किए गए थे तथापि वह निडर होकर लिखते रहे और सर्वसाधारण में उनके पत्र का आदर होने लगा।' भारतेन्दु इस प्रकार वर्तमान हिन्दी पत्रकारिता के दिग्दर्शक सिद्ध हुए। इस प्रकार सरकार ने यदि भारतेन्दु पुरस्कार पत्रकारिता के लिए स्थापित किया तो अच्छा किया और यदि इस पुरस्कार के योग्य कोई पत्रकारिताविषयक कृति चुनी गई तो यही सोचकर कि इस कृति का स्वर भारतेन्दु की तरह राष्ट्रीयता से ओतप्रोत और निर्भीक होगा। चतुर्वेदी जी पत्रकारिता के इस तेवर के धनी हैं और उन्हें दिया गया पुरस्कार हिन्दी पत्रकारिता के प्रति सम्मान का सूचक है। चतुर्वेदी जी १९४१ से ही हिन्दी पत्रकारिता के साथ जुड़े हैं। पत्रकारिता-आन्दोलन से भारतीयस्तर पर जुड़े रहने के कारण वह अखिल भारतीय पत्रकारों और हिन्दीतर भाषा-पत्रों से सम्पर्क साधे रहे। अमरीका, मैक्सिको, क्यूबा, ब्रिटेन, फ्रांस, सोवियत संघ, जापान, आस्ट्रेलिया आदि देशों की पत्रकारिता का भी उन्होंने निकट से अध्ययन किया। १९६६ में बर्लिन में हुए अन्तर्राष्ट्रीय पत्रकार संगठन के सामाजिक आयोग के वह उपाध्यक्ष बने, अतः देश-विदेश की पत्रकारिता और उसके आयामों का उन्होंने गंभीर अध्ययन किया। यह पुस्तक उनके इन्हीं दीर्घकालीन अनुभवों का परिणाम है।

इस पुस्तक में २६ निबन्ध हैं। पहले ब्रिटिश, स्वीडिश, अमरीकी, जापानी पत्रकारिता पर विस्तार से लिखा गया है और फिर अन्तर्राष्ट्रीय पत्रकार आन्दोलन तथा



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

प्रेस की नई प्रौद्योगिकी पर प्रकाश डाला गया है। चतुर्वेदी जी का कथन है कि स्वीडन, पत्रकारिता की दृष्टि से आगे है। हंगेरियन पत्रकार संघ की उच्चस्तरीय क्षमता अधिक है जिसके कारण अन्तर्राष्ट्रीय पत्रकार संगठन ने इसे पत्रकारों का एक स्कूल चलाने तथा उच्चकोटि के मुद्रण की एक पत्रिका प्रकाशित करने का भार सौंप रखा है। स्वीडन के पत्रकारिता उद्योग से एक बात सीखी जा सकती है कि बड़े पत्रों के साथ छोटे पत्र कैसे जीवित रह सकते हैं? सरकार ने वहाँ कानून पास कर बड़े पत्रों पर शुल्क लगा दिया है। उसी राशि से छोटे पत्रों को सहायता दी जाती है। पत्रकारों के आचरण के लिए वहाँ प्रेसलोकायुक्त की स्थापना भी हुई है। अमरीकी समाचारपत्रों की यह विशेषता है कि उनका प्रचार मुख्यतया स्थानीय है। प्रति व्यक्ति समाचारपत्रों की खरीद तथा गणना की दृष्टि से जापान आगे है। इस तरह की कई नई जानकारी पुस्तक में उपलब्ध हैं।

इस पुस्तक की एक विशेषता यह है कि इसमें विश्व-संचार संदर्भों में हिन्दी पत्रकारिता के स्वरूप और भविष्य पर प्रकाश डाला गया है। 'विश्वमानवचेतना में हिन्दी संचारमाध्यम की भूमिका' निबन्ध इस दृष्टि से पठनीय है। चतुर्वेदी जी का कहना ठीक है कि प्रारम्भ से ही हिन्दी लेखक किसी एक प्रांत या विचारधारा तक सीमित नहीं रहे। मुद्रण की दिशा में भी हिन्दी का सार्वभौमिक रूप था। हिन्दी के पहले टाइप पुर्तगाल और हालैंड में ढाले गए। मुद्रण के बाद तो हिन्दी को सार्वदेशिक रूप मिल गया। बंगाली और मराठी हिन्दी सम्पादकों के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। श्यामसुन्दर सेन, अमृतलाल चक्रवर्ती, विष्णु पराड़कर, लक्ष्मीनारायण गर्दे, माधवराव सप्रे हिन्दी के पितामह पत्रकार हैं। आज भी हिन्दी में ऐसी पत्रिका की जरूरत है जिसमें संसार की साहित्यिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक गतिविधियों का विश्वव्यापी परिचय उपलब्ध हो तथा वह विश्व के किसी भी कोने में उपलब्ध हो सके। 'पत्रकार का दायित्व' इस पुस्तक का संवेदनशील अध्याय है। इसमें पत्रकारिता की पेशेवर नैतिकता, तथ्यपरक वास्तविकता और राष्ट्रीयनिष्ठा, सामाजिक-नैतिक मूल्यपरकता, मानवीय अधिकार रक्षा, उत्पीड़न विरोध, पीतपत्रकारिता आदि पर विभिन्न पहलुओं में विचार किया गया है। यह निष्कर्ष उचित ही है कि यदि पत्रकार अपना काम करते समय आत्म-निरीक्षण को स्थान दें तो समाचारपत्र और सरकार दोनों ही सुरक्षित रहेंगे। यह बात इसलिए भी महत्व की है कि भारत में अभी कोई सर्वमान्य आचारसंहिता नहीं है।

पुस्तक के अन्तिम चौदह अध्याय हिन्दी-पत्रकारिता के इतिहास तथा प्रवृत्तिपरक और प्रकाशनसम्बन्धी समस्याओं पर केन्द्रित हैं। हिन्दी पत्रकारिता की विविध प्रवृत्तियों का खुलासा किया गया है। पत्रकारिता की योग्यता और पूँजीनिवेश की क्षमता का विश्लेषण कर सम्पादन-प्रकाशन की समस्याओं पर दृष्टिपात किया गया है। प्रतिरक्षा, कृषि, उद्योग, सिनेमा, परिचर्चा, साहित्यिक रपट, खेलकूद, राजनीतिक घोटाले आदि बिन्दु हिन्दीपत्रकारिता को लोकप्रिय बनाने में मुख्य कारण सिद्ध हुए हैं। पहली पत्रकारिता से आधुनिक हिन्दी पत्रकारिता का यह नवीन आयाम है जो हिन्दीपत्रों के आर्थिक ढाँचे



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

को प्रभावित करता है। चतुर्वेदी जी का यह कथन भी उचित है कि हिन्दीपत्रों के सम्पादकों को हिन्दी की परम्पराओं से परिचित होना चाहिए। पत्रकारिता का क, ख, ग न जानने वाले भी यदि पूँजीनिवेश के कारण मालिक हैं तो सम्पादक भी उन्हें ही होना चाहिए, यह प्रवृत्ति घातक है। 'आज पत्रकारों में, विशेष तौर पर देशी भाषा के पत्रकारों में जो यह संत्रास की भावना पैदा हो गई है कि वे कितने ही अच्छे पत्रकार क्यों न हों, वे वर्तमान व्यवस्था में किसी पत्र के सम्पादक नहीं हो सकते जब तक कि वे किसी मालिक के चापलूस न हों या खुद मालिक न हों, यह व्यवस्था दूर होनी चाहिए।' पत्रकारिता आज शगल नहीं, एक उद्योग है। अतः जनहित और मनोरंजन के साथ अर्थ-संचय पत्र-कारिता का लक्ष्य बन गया है। ऐसी स्थिति में अखबार वही चला पाते हैं जिनके पास पर्याप्त पूँजी है और यदि पूँजी उधार लेकर लगाई गई है तो उसका परता डाल कर उसे चुकाने की योग्यता भी रखते हैं। अतः पत्रकारिता की नित्यनवीन उपलब्ध तकनीकों की जानकारी के साथ-साथ उसके ज्ञान-विज्ञान बोध की आवश्यकता पर भी बल दिया जाना चाहिए।

कहना न होगा कि चतुर्वेदी जी की यह कृति भिन्न-भिन्न समयों पर लिखे गए निबन्धों का ऐसा शृंखलाबद्ध प्रकाशन है कि इसमें पुस्तक की पूर्ण अन्विति पाई जाती है। पत्रकारिता विधा, इतिहास, तकनीक, चिंतन-माध्यम और विचार-जगत् की दृष्टि से तो इस पुस्तक में नई जानकारी मिलती ही है, भारतीय और विदेशी पत्रकारिता के स्वरूप और सम्भावनाओं का परिचय भी प्राप्त होता है। सूचनाव्यवस्था के विविध आयामों और मनुष्य की सोच में लाए जाने वाले परिवर्तनों के परिप्रेक्ष्य में भारतीय पत्रकारिता के विविध पहलुओं पर भी इस रचना में प्रथम बार प्रकाश डाला गया है। यह पुस्तक शैक्षणिक ढर्रे की रचना नहीं, व्यावहारिक पत्रकारिता का दर्पण है जिसमें प्रौढ़पत्रकार का अनुभवी मन और उसकी प्रतिक्रियाएँ प्रतिबिम्बित हुई हैं। हिन्दीपत्रकारिता की समस्याओं, उद्देश्य, साधनों और वर्तमानरूप तथा भावी सम्भावनाओं पर बेबाक संवाद पढ़कर चित्त प्रसन्न हो जाता है। अच्छा हो हिन्दी के पत्रकारबन्धु इस पुस्तक के निष्कर्षों को अंगीकृत करें। उनके सामने देशी-विदेशी पत्रकारों की गरिमामयी परम्पराएँ और संस्थाएँ इस पुस्तक के माध्यम से सामने आकर खड़ी हो गई हैं। प्रेस की नवोन्नत प्रौद्योगिकी उनके लिए चुनौती है। अधुनातन होते हुए भी हमें भारतेन्दु, प्रतापनारायण मिश्र, महावीरप्रसाद द्विवेदी, स्वामी श्रद्धानन्द और पराड़कर जी की परम्परा को अक्षुण्ण बनाए रखना है।

मैं पुस्तक के लेखक श्री जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी को इस उत्तम रचना के लिए बधाई देता हूँ। उनके प्रकाशक साहित्य संगम के संचालक से अनुरोध करता हूँ कि अब वह चतुर्वेदी जी से हिन्दी पत्रकारिता का सांगोपांग इतिहास लिखवाकर प्रकाशित करें। एक बहुत बड़े अभाव की पूर्ति होगी।

—डा० विष्णुदत्त राकेश

---



CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri

## परामर्शदातृ-मण्डल

| | | |
|---|---|---|
| १—श्री ओम्प्रकाश मिश्र | — | प्रोफ़ेसर तथा अध्यक्ष मनोविज्ञान विभाग |
| २—डा० राधेलाल वार्ष्णेय | — | प्रोफ़ेसर तथा अध्यक्ष अंग्रेजी विभाग |
| ३—डा० निगम शर्मा | — | रीडर तथा अध्यक्ष संस्कृत विभाग |
| ४—डा० जयदेव वेदालंकार | — | रीडर तथा अध्यक्ष दर्शन विभाग |
| ५—डा० भारतभूषण विद्यालंकार | — | रीडर, वेद विभाग |
| ६—डा० जबरसिंह सेंगर | — | निदेशक, विश्वविद्यालय संग्रहालय |
| ७—श्री चन्द्रशेखर त्रिवेदी | — | रीडर, मनोविज्ञान विभाग |

मुद्रक—जैना प्रिन्टर्स, ज्वालापुर

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri
Digitized by Sarayu Foundation Trust, Delhi and eGangotri



**अमृतसर कांग्रेस अधिवेशन—1919 का ऐतिहासिक चित्र ।**

स्वामी श्रद्धानन्द जी इस अधिवेशन के स्वागताध्यक्ष थे। चित्र में स्वामी जी के साथ श्री गोखले, श्री मालवीय जी, पं० मोतीलाल नेहरू, मौलाना अब्दुल कलाम आजाद, श्रीमती ऐनी बेसेंट तथा पं० जवाहरलाल नेहरू आदि विराजमान हैं।

CC-0. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow
CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow